



# समयके पाँच

मासनलाल चतुर्वेदी



भारतीय ज्ञानपीठ काशी

गीठ लोकोदय ग्रन्थमाला : हिन्दी प्रन्वाह-  
माका सम्पादन-निबामक  
मीचम्वर जेव

SAMAYA KE PANVA  
MAKHAYLAL CHATURVEDI  
Publication  
Bharatiya Janspeeth Kashi  
First Edition 1962  
Price Rs. 5/-

प्रकाशक  
भारतीय छात्रपत्र कारी  
मुद्रक  
सम्पत्ति मुद्रणालय बाराणसी  
प्रथम संस्करण १९६२  
मूल्य तीन रुपये

## दो शब्द

व्यक्तियोंसे बँधा होनेके कारण यह संग्रह जमिक प्रयमनासीक है । प्रतीय होता है इन व्यक्तियोंके जीवनने मेरे जीवनको रहन रह किया था ।

जीपकेओ बहुत पहले लिख गया है कि महापुरुषोंके जीवन हमें यह स्मरण दिलाते हैं कि हम किस प्रकार अपने जीवनको ठँका सके हैं । इस पुस्तकके बहुतसे व्यक्तियोंने जो करण-बिह्व छोड़े हैं वे कभी मिट नहीं सकते । इसलिये समयके पाँच' पर मस्तक रखनेके सिवाय और कोई चारा नहीं दिखाई देता ।

विस्तरेपर पढ़े-सढ़े मैं इतना ही लिखा सकता हूँ । इस समय तो मैं समस्त देशका ध्यान भारतको उत्तरी सीमापर नवाबिराम हिमालयपर जीवनना आइटा हूँ । लोकमान्य ठिठक राष्ट्रपिता बापू, सुभाषचन्द्र बोस और साँचीकी रानी की नायिका सुमित्रा कुमारी चौहानका इस पुस्तकके माध्यमसे जो पुनः-स्मरण किया गया है, वह तभी सफल हो सकता है ।

बीपाबकी

अनिवार दिनांक २०।१ । ६२

—मालनलाल अतुर्वेदी



## अनुक्रम

१ तुम्हारी स्मृति	१
२ भारतीय अशांनिक जनक	७
३ महात्मा गान्धी : १	१९
४ महात्मा गान्धी : २	२५
५ महात्मा गान्धी : ३	३१
६ महात्मा गान्धी : ४	४५
७ सुभाष मानव : सुभाष महामाणव	४८
८ वैजस्विकाक प्रतिविधि : विद्वत् सार	५४
९ गणेशशकर : एक संस्था	५७
१० स्वागत व महाभाग विमोच	६
११ प्रेमचन्द चले गए ।	६६
१२ पण्डित रविशंकर शुक्ल	७३
१३ सेनाप्रामाणी विभूति मधुवाका	८
१४ राष्ट्रीयक डॉक्टर अम्बारी	८४
१५ मैं जयदेव जय-जयकार	८७
१६ श्रीपुत्र रामचन्द्र शुक्ल	९३
१७ जयशंकर प्रसाद	९४
१८ सुमित्रानन्दन पन्त	१३

१९ सुमध्याकुमारी चौहाय	१ ४
२ पुरातत्व ज्ञानका सूत्र	१ ०
२१ अक्षर कश्मलमिह चौहाय	११
२२ अक्षर कश्मलमिह चौहाय	११२
२३ अक्षर कश्मलमिह चौहाय	१२२
२४ अक्षर कश्मलमिह चौहाय	१३
२५ अक्षर कश्मलमिह चौहाय	१३५

## तुम्हारी स्मृति

दुनियाकी मनुष्यसुमारी मस्त हो रही है। मर्यामें दुनियामें बो-बार ही गिने चुने चीज रहते हैं। पन्हीकी गिनती दुनियाकी गिनती है और पन्हीका मत दुनियाका मत। कोई चाभीस बरस पहलेसे देखत आये हैं कि एक उस घरीबने जिसे अपनी सोंपड़ी नसीब नहीं और बमीरने भी जियने जूझि-सिझियोंको हाथ बांधे लड़ा पाया उस बेपड़ेने जिसके लिए हाथकी मक्कड़ी ही मजिष्ठ थी और उस पड़े-सिझने भी जिसको अपनी बुद्धि बेचकर रोटियां नसीब हो जाती थी उस किसानन जिसपर इन्धालके नामपर बरबाबार बढ़ते गये और उस व्यापारीन जिसने केवल रुपये मालकी बनाहीपर अपनेको नीकाम पाया बार-बार अपने हुबयको टटीका बड़े घुमूममें और बंगी मंछोमें कड़ी दुपहरीमें और टगडो रातोंमें ठेक बुदबोमें और कपारी बरसातमें अपने हुबयको परखा और उसपर प्रकृतिके द्वारा कुछ पुरसा पाया। एक दिन आया कि करोड़ोंने अपने दिनों पर एक घम्स लिखा पाया। घम्स ऐसा था जो मिटने मिटता नहीं मुक्तये मुक्तता नहीं कुड़ाये छूटता नहीं और वह था— ठिलक'।

बात एक ही बात हैकर यह मूरत बजावेमें सतरी। बाइलमें जान थी। एक तरफ़ बजानी बनता और दूसरी तरफ़ जानकार सरकार। बामिक ? हाँ वह बामिक था और समाजसेवक भी। वह मोतिमल्लामें कम न था और बिहलता ऐसी बनोबी थी जियपर मनुष्यता अमिमल कर सकती है जहाँ ज्योतिषमें उसकी कलम कमाक करती बड़ी साहित्यका वह आचार्य जाना जाता। मानुषुमिके बपासकोंमें उसका बरवा उसी की प्राप्त है और महाराष्ट्र प्रान्तकी सेवा करवेमें वह 'बीर बाबी' बहुत बाये होवोंकी संख्या कम नहीं। प्राचीनतापर ऐसा उपासक कि वह आर्क-



टिकमें बेरोकरी उत्पत्ति बतलाता ।

और इन तीर्थोंकी ओर हिन्दू धर्मके व्यासक होते साथ देता । चिड़नवासे चिड़ सकते हैं कि उसने बिलामतही झोटकर प्रायश्चित्त किया पर यह उसका अपनापन या सच्चाई थी । पर उसके लिए एक बात कही जाहि। वह राष्ट्रीय यात्राका या और समुहपर करना उसका काम था । पुस्तकी ताकत एक ही काय बूझती है और सब पुरा करती है । परम पुस्तकी ताकत जीवनका मिश्रण पुरा करती है और उसके लिए पुष्पी और आकाश सबकी साधन बना जाकती है । वाममें धैर्यतपर उसे कृष्ण और उसकी पीठाकी शक्ति हुई और जीवित वैदिकको मजकूर उसने राष्ट्रीयताका मजकूर निकाला । उसने तरीकोंका निवाज बननेमें हरकत समझी और उनके कष्टोंको दूर करनेमें उसकी जान इस तरह लड़ने लगी जिस तरह मरम्मीके बाद बरसात होन लगती है । वह उसकी आवश्यकताएं बुझने लगी और बीरे-बीरे उनके हृदयमें पहुँच गया । अपने संबंधित पुस्तककी उसने समाजकी व्यवस्था रखा और पैदा होनेवाली विजयकी उसने क्रमशः घाट छठारना शुरू किया । उस गरम कहा जाता है पर वह छप्पा का योग्य-बड़ी पसन्द नहीं । उसकी बुद्धिने इसे स्वीकार नहीं किया कि कोई एक पैदा हुएर देखको गलाम बनाये रहे ।

उसने परिस्थितिका बदलना चाहा । रास्ते से ने । एक सच्चाईना जिनमें अज्ञानी जनता साथ न देनी अधिकारिणी शक्ति बुझनी भँझती और वह गुर्को और सेवाओंके बहसमें मिलती भूख अधिक्रिया कष्ट और बढोर बण्ड । परन्तु कुछ बीबीतों पण्डे ईमानदार रहता और कहता उदारके आचारकी सृष्टिके अवतारकी यही परिभाषा है । दूसरा रास्ता भी था । बीरे-बीरे नाम बजाया जाता । दिखाया जाता कि अभी कुछ नहीं चाहत पर नीजा बुझा जाता है कि यानु हरा दिया जाये । आत्ममें एकल न ब्रह्म जाता और मनमूवे ही में मोड हो जाती । उसे कहता मार्ग जाता उसका सबसे बड़ा पुत्र विरोध-जलदयाय रहा ।

वसने अपनी पूरी सम्पत्ति सामने रखी और कभी दुकड़ोंपर मन नहीं लगाया। वह 'नामिकोंमें पहुँचा और राष्ट्रीयता' मिलने साधन प्राप्त हो सकने से उसने जबकि बरबाँस बैठकर प्राप्त किये। साहित्यको टटोला और जीवन-ज्योति जलमानेवाली बलि उसमें भर दी। उसे उन सब बुद्धोंकी ज्योति जो बिगड़े राष्ट्रीयताको जीवन मिले, राष्ट्रीयता उसका जन्म था और बेसुकी स्वाधीनता उसका ध्येय। वह अन्धकार जालीन बिरोधी रहा और उसने अधिकार न मिलने तक अधिकारियोंसे मित्रता पाय समझा। उसकी बुद्धि नीतिके उसमें हुए बाधमध्यस्थमें प्रवेश कर जाती और एक ऐसा तत्त्व उसे दृढ़ देती जो उसके समको निबाहता और ध्येय की ओर उसका रुदन बढ़ाता। वह जनताको मजबूत किये रहता और बिना हथियारोंका वह कमजोरी सिद्धांतन ठिकाना करता।

उसके काम करनेके इन नाविक सजीवता व्यावहारिक सत्यता और ध्येयकी दृढ़तासे उसे उसके देशके बड़ों और वैयक्तिक विस्थापकी बीच बना दिया। परिणाम यह हुआ कि ईसा और मुहम्मदके अनुयायियोंके समान बिना कसमें ही उसका एक दल बन गया। पर उसने अपने उसके दलकी जलतापर इसलिए बढ़ना शरम्भ किया कि उनके कटोरे राष्ट्रीय यथाक पत्रपत्रोंमें छहारा मिले। बरिबकी उम्मीदोंमें उसका कोड़ा समुद्रोंमें भी मारा। वह जलजलोंको उत्पन्न करता और उन्हें लासी नहीं जाने देता। संगठन उसका स्वभाव था वह उचित कर्तव्योंके लिए उचित ध्येयोंकी योजना करता और उन्हें इच्छा अधिक अपना बना जाता कि संसारकी कोई मानवीय ताकत उन्हें जीवनमें भरतना न पाती। 'जन्म निम्न' के बड़ माधन उसके भागमें कटि बाँधे और उसका अजुनके तारकी-की उसके उपदेशों समेत कलमके करारागारमें बन्ध कर दिया। उसने उसे साध किया और भारतीय जर्मि आनेवाली मुर्दोंकी सधयपर बुद्धि की। वह 'एक्स्ट्रीमिस्ट' कहा जाता है किन्तु ईसा मुहम्मद जबवा गान्धीके समान अपनेको जयन्ती सात्विकताकी एक्स्ट्रीम बुनियातों बुनियात बनाकर

रहा और किसी एक मुष और व्यवहारमें बरम सीमा न दिलाकर प्रत्येक मुष और व्यवहारको पैदा होनेवाली परिस्थितियोंके साम-साम समान रूपसे विकसित करता रहा ।

इसे श्रम कहना जाता है । वह है भी । पर वह श्रमविहीन ब्रह्मविहीन नहीं । बस गुणोंका दुस्प्रयोग नहीं किया । प्रकृतिके प्रधान क्रिये हुए मुषका उसने सुदुष्प्रयोग ही किया । वह चाहे राजाओंको शोभनेवाला रत्नोत्पन्न हो चाहे यापियोंकी मोहनवाला सतीमुष । स्वामी रामके कर्मगानुसार उसने रत्नोत्पन्नकी भी व्यवस्था नहीं की । एक अपनी बुद्धिमाके सम्पन्न-धीन निर्माताकी हैसियतसे उसने अपने अनुयायियों या शीषोंके आने कोई ऐसी बात नहीं रखी जिसे वे अवगमन करके छोड़ सकें । उसने पहले उन्हें ठगकी शिखाएँ उत्पन्न करके भारतवर्षमें उलट-वलटकी परिस्थितियोंको निर्भीकता और सावधानतासे उत्पन्न किया । कभी उसने स्वर्गधीन आकाश उत्पन्न करके देवोंको 'क्रियन्त' ( उत्पत्ति ) के लिए उमाड़ा और कभी शायफाँटका हामी हाकर क्रियन्तकी लाकड़में अनक-गुनापन ला दिया । इस ठग वहाँ पड़ीयोंको भारतीय करणम उसमें डेर बिछाया वहाँ मनोंको भारतीय करनेके लिए बड़से प्रारम्भ किया । मनी राष्ट्रीय मिलाका बीड़ा छटया । उसने बिना बना की भी कि पहले घरीरपर स्वराज्य फिर मनपर स्वराज्य फिर कार्यपर स्वराज्य फिर साधियों-पर स्वराज्य और फिर समूचे देशपर स्वराज्य । पुत्तामी बड़े पसन्द न की फिर वह किसीकी भी न ।

वह परम-भुविन पुष स्थायीगताका उद्गमक था । इस काममें उनका मजदूर बुर और भले सब जीवों और पक्षियोंका उपयोग करता । परिस्थितियों और व्यक्ति उत्पन्न करनेके बाद वह उनका मजदूर करता । फिर धीरे-धीरे वह अपने संगठनको और उनकी परिस्थितियोंको बढ़ाता और ढँबी बनाता और अन्तमें सारी परिस्थितियों व्यक्तिओं और वस्तुओंका व्यवहारी पुषपर बनकर उहाँ अपने ध्येयको निश्चय बनातेम लया

बेटा । बेस जाना बख्शू टी स्टैडके समान उसके बिध साधारण बात थी । बरवाचारी सक्ति यह सुननेको सरसरी रहती कि वह कमसे-कम एक बार इन जाये पर इन जाना उसको पड़ी हुई किताबोंमें क्याचित् उसे निम्ना नहीं मिला । राज सख्तारोंके बख्शपर क्रिये जाते हैं पर उसन इसे झूठा छिड़ किया । उसने छिड़ किया कि कोई परायी ताकत बनताकी हम्साके बिना उसपर हम्सा नहीं रह सकती । विरोधिनी ताकतकी यह बड़ी भारी हार थी कि वह उस बाबन बर्षके बूढ़ेको काबे पानीकी सजा दे । इससे उसकी शक्ति और सजीवताकी परीखा हो सकती है ।

महाराष्ट्रका वह प्राण था । परन्तु उसने महाराष्ट्रको सोमारहित कर दिया था । उसकी आज्ञा पाकनेमें बख्शोरसे कन्याकुमारी तक सभी महा राज हुआ गया था । एक अद्भुत शक्तिके समान उसकी सत्ता भारतीयोंके हृदयमें बिहार करती और खमीन तथा साओपर बिदेसी ताकतका साम्राज्य रहते हुए भी वह करोड़ों भारतीयोंका हृदयसम्पाद था । बड़ी-बड़ी शक्तियाँ उसके सामने सिर झुका देतीं और गहरी तिष्ठकन मेरे व्यक्तित्वका अपन ध्येयकी सड़ककी बिट्टी बना जाता । उसकी सत्ताके मयस इन्कैम्बडे स्वाय बेकताकी इसीलिए अग्रिम करना पड़ा कि तिष्ठकके प्रति स्वाय करनेसे ब्रिटिश शासनकी छीर नहीं । वह गत वालीस बपसे काममें क्या था और बेपके मत वालीस बपोंका इतिहास उसका निम्नका इतिहास है । भारतका कठोर दुस्मन जो बार-बार तिष्ठकका नाम लिखे बिना गत वालीस बपोंका इतिहास नहीं लिख सकता था वह अपनी बुद्धिकी अनक शक्तियोंका किठना ही उपयोग क्यों न करे ।

उसने देशको सजीवता थी और बार-बार मिटकर यह दिखाया कि पूर्ण स्वाधीनता ही भारतका जीवन है । वह हमसे एक तिष्ठ की कम केनेके लिए राजी न था । वह भारतीय पार्श्वमेष्णका सपना बेकता और अपने देशमें इन्कैम्बडेकी बीसों नीतिमत्ता अमेरिका-सा अध्यवसाय और अर्मनी-सा संमटन लानेको प्रयत्नशील रहा । प्रतियोगी सङ्कारिणके लिए

बस उस दिन राखी हुआ जिस दिन उसके देखको कुछ अधिकारकी कुर  
मिली । किन्तु वह अधिकारोंकी कुर उसने वह पोषणा करके की की कि  
मे कीसिद्धमें नहीं आऊँगा । याग्यकी महान् आत्माने उसकी लोकमान्यता-  
की सिरपर किया आकाशरायकी मित्रविनी धनितने उसे मस्तक मुकुमा  
और मातृकीयकी मञ्जुष मूर्ति उसके साथ रहकर गम्य हुई । उसने विद्याया  
कि एक दिनका स्कूलमास्टर, दूसरे दिनका सम्पादक और तीसरे दिनका  
कैदी किसी देखका लोकमान्य भववान् हो सकता है—उसी तरह जिस  
तरह एक विषका कैदी हुनरे दिनका आकाशका पीपाक और तीसरे दिनका  
सागकी भगवान् कृष्ण । जिस तरह उसकी धर्मित आत्मा एक लकी उसी  
तरह यदि उसके देखके छात्र न छिने होते तो उसने अपनी एक-कककता  
से भूमण्डलमें अपने आत्मको महान् समानायक और प्रचण्ड विजेता सिद्ध  
करनेमें कमर न की होती ।

उसका जीव या उसके मित्रनकी पूर्वताका दुत बाह्य बीसा हो बाह्य  
आई रहता हो और बाह्य जिस तरह रहता हा तो की बसपर बहुर  
करनवालेका रहता बार अनुयायीपर पड़नेके पड़ने ही वह सम्राज्य किया ।  
उसके जेब आत्मका भी इतिहास यही है और यही है उसकी समझमें  
निवास करनवाले पुनरात्माओंका प्रवाहरण । उसके गले पर अपनी पोषणा  
के अनुसार समझों और क्रियाओंके मुवा उपस्थिति अवलपरमें मापन देते  
हुए बतलवा मेरे दिन कोई है तुम मेरे बीते को स्वप्न प्राप्त करो ।  
उस समय यह नहीं बात था कि उसके देखपर उसकी जिम्मेवारी इतने  
धीम का पड़ेकी और उसकी बनायी गयी विशेषताओंके अनुसार—एक  
मिष्टनके मिठाही समझी सैरहाजिरीक पुनन पड़ेये । पर ही बही गया ।  
और आनुओंकी पोंछते हुए देखकी आचार्य धीम ही तीनोंकी देनामें  
पूरी संस्मिडाने लड़ा करती गजर आयी ।

## भारतीय अज्ञान्तिके जनक

लोकमान्य तिलकपर कुछ लिखना बाहुमयी पंथाके तटपर बड़े होकर बूँदोंका रजिस्टर बनाने-बैसा कठिन है। जिस समय उनका स्वर्णवास हुआ था उस समय उनके विरोधी प्रभागके अंगरेजी दैनिक पत्र 'लीडर' में उसके स्वनामवन्ध सम्पादक स्वर्गीय श्री सी. बाई. जिन्तामणि ने लिखा था कि लोकमान्य तिलक एक व्यक्ति नहीं एक संस्था थे। महात्मा बान्सीके पूर्व भारतवर्षका सारा तेज और श्रेष्ठ लोकमान्य बाळ पंथापर तिलकमें प्रतिबिम्बित प्रतिच्छित और प्रतिपक्षित हुआ था। उनका जन्म महाराष्ट्रके रत्नागिरि जिलेके बापोली तहसीलमें चिन्तामणि नामक स्थानमें २३ जुलाई १८५६ को हुआ था। उनका पाऊनेमें झुकते समयका नाम केसव था। किन्तु बच्चेको महाराष्ट्र परिवारमें बाळ [बाळक] कहकर पुकारनेकी प्रथा है। इसीलिए कथावित् बड़े होनेपर लोकमान्य बाळ कहकामे और महाराष्ट्रीय पत्रलिके अनुसार ही अपना तथा पिताका संयुक्त छिप्ट नाम हुआ बाळ भंगावर। तिलक उनका उपनाम था। लोकमान्यसे बड़े होनेपर किसी छापीन पूछा तुम अपना केसव नाम क्यों नहीं लिखते? तिलकने उत्तर दिया कि मरी मौ मुझे 'बाळ' कहकर ही पकारती थी। इसलिये मुझ बाळ कहकामा बहुत प्रिय है। पेशवामोंके जमानेमें बापोली तहसील स्वर्णदुर्गके नामसे पुकारी जाती थी। यह इसका कोंकनमें है। लोकमान्य कोंकनस्थ चितपावन ब्राह्मण परिवारमें पैदा हुए थे। उनके धित्य स्वर्गीय श्री न. वि. केसकरके घरोंमें चितपावनगोंपर धिनिष्ठ पत्नीकी उपमा बराबर कामू होती है। श्रीक साहित्यमें यह माना गया है कि यह पत्नी पितासे उत्पन्न होता है, नकेस रहता है, भीड़ बाड़ इसे पसन्द नहीं होती बड़ान बहुत

बड़ी होती है। यह भी कहा जाता है कि इस पक्षीका 'इन्जनमरम' होता है। अपनी एक स्थितिसे ऊँच जायी कि वह अपने ही पंख बना सकता है और अपनी चितासे वह सेजस्वी होकर फिर जाफायरों तक पहुँचने मरने लगता है।

उपमाकाके सम्राट् और उद्योगियोंके कोमल पारशी केसरबीजा यह प्रिन्सिपल पक्षीका सदाहरण कोई स्वीकृत करे या न करे किन्तु लोकमान्यका जीवनसे तथा उनकी परिस्थितियोंकी रचबूँत बरताने होनेवाली भारतीय राजनयिकाकी विनयारियोंका नाम ही लोकमान्य तिलक है।

बाल्योत्पन्न-प्रियता मानो उनके स्वभावमें भर दी हुई थी। वे व्यापक विद्याकीके पुत्र स्वामी राजराजके इस कवनके आत्मस्थ प्रतीक थे कि—

सामर्थ्य आइये कलापलीचे,  
जे जे करील त्याचे  
परम्यु तेथे मगईताचे,  
अभिधाम पाहिजे।

अर्थात् बाल्योत्पन्नमें सामर्थ्य है उसे जो कर ले जाये वह सामर्थ्यहीन है। बाल्योत्पन्न करते समय कबल मगवान्का अविवेकन चाहिये, यदि इस उम्रके बाल्यमें देने लगे तो लोकमान्य तिलक जीवनकी इन्जनोंका दुष्ट-गुरु मिल जाता है।

सोच करारित यह सोचते हैं कि स्वर्गीय लोकमान्य केवल राजनीतिक दलचलके जनक थे। हाँ वह वैमल्यवान् क्षीरालय जैसे कदवी इष्टियोंके अवरुद्धने लो लोकमान्यको 'प्रवर माँव इष्टिपन अनुरेख' अर्थात् भारतीय अध्यात्मिका जनक ही किया था। किन्तु जिस तरह मुलायम पीपा लहसुनों और हमनेवे-वे नहीं किन्तु कीर्तन-शैली ही उभरा है काँटोंका ही घट्टी बरन करता है प्रतिकूल अनुभवोंमें भी हरियाता है और मस्तकपर कस्मियोंके मुहुड रचकर भी खरीरवर नटकाकीर्ण मुखमौरो भोगता है जनी तरह प्रत्येक महापुरुष और लोकमान्य भी संकटोंके विचकर हो

अपने युयुक्त निर्माण कर सके। लोकमान्य तिलक केवल अराष्ट्रिय ही नहीं थे जिन्होंने संघर्ष उत्तराध क्रिये हों और फिर पुनर्बाप अनुकूल परिस्थितियोंकी प्रतीक्षामें छिप गये हों। वे अराष्ट्रियकी केवल वे अराष्ट्रियकी बच्चा थे और अराष्ट्रियता थे। केजरीके नमस्कार और बागीके नमस्कार व अराष्ट्रियकी तरह केसे और बरबानकी तरह एक युग निर्माण कर रहे हैं। यदि भारतीय स्वतन्त्रताकी आवाज उठाते सपामी तो अपन नगर पुनाम बिस्मल-संस्वाओंका निर्माण भी उन्होंने किया। एक बार समझे किसी मित्रने पूछा कि भारतमें अराष्ट्रिय मिल पाये तो आप अपने लिए कौन-सा किभाव चुनते? उस समय सीधे मानो लोकमान्यक दूर दूरपर भारतीय संस्कृतिक जन्म माया केकर कहा हुआ था। बाकि 'म' तो स्वराज्य सरकारके किसी काठिनायें नमिलका बच्चापक हो जाईगा। क्या महात्माजीमाके बीच-अगरसे पोजित आरके अधिकारा राजनीतिज्ञान इस सीमाको नहीं बँटा जा सकता है?

तिलक बचपनसे ही मेधावी थे। उनका पिता नवाबराज स्कूलोंके इन्स्पेक्टर थे। उनको अपने पुत्रके मेधावी होनेकी सूचना उसको एक छोटी-सी धराएसे मिली थी। एक दिन बाळक बलवन्त स्कूलमें पढ़ने नहीं गया। पछते हैं कि उस दिन उनके पिताजी बीरेपर गये थे। वे गरमीके दिन थे। क्यों ही वे बीरेसे लौटे क्यों ही पुत्रके स्कूल न जानकी खबर उन्हें हो गयी। बिना तरह अनिक अपने जन और राजनीतिज्ञ अपनी महात्माजीमासे परावित होता है वही तरह बिहान्का खेप है। यदि सन्तदर बिहान्काके शब्दोंकी उधार से तो बिहान्का बीपक बलवन्त कि खेपका कामका आया' तो नवाबराजजीने खेपित होकर अपने पुत्र-प्रीको सामन उपस्थित करनकी आज्ञा दी। नन्हें-से तिलक माये किन्तु उस मरी नरमोमें पुनाके कठोर काठोमें पहननेका कई-बरा हुआ मोटा अंगरक्षा पहनकर। पुत्रको ईमानकी तरह प्यार करनेवाले पिता बाळक बलवन्तकी धराएसे बाप-बाप हो गये। उन्होंने कहाकि समझ लिया कि यह प्रतिभा ताड़नाकी



बसु नहीं है।

अपने राजनीतिक विचारोंके कारण विदेशी सरकारके द्वारा लोकमान्य तिलक जीवित भर कहा सहने और बार-बार बेतुका ज्ञानके लिए बाध्य रहे। जो समाजा लोकमान्यको काम करनेके लिए मिला वह ऐसा था कि उस समयके सरकार-प्रेमी आन्दोलनकारी 'बेकारोंके नेता' कहकर उनका मजाक उड़ाते परिचित राजनीतिक संकटसे बचनीत होकर उनके नाश में आते उनके स्वयंके द्वारा निमित्त देवकन एंग्लोकेवल सौसाइटी-बैली संस्थाओंमें ब्रिटिश सरकार-द्वारा पदग्रस्त रहे आते और साधारण होकर लोकमान्यको इस्तीफा देना पड़ता। जब कर्टीका सहायि वचन से अपने तिरपट उठते होते तब जीवित बचकर उनके साथ होते। हाँ सोच मन-ही-मन उनकी पछा करते कन्हू अवतार समझते किन्तु उनके बेल जानेपर प्रायः कोई न जाता। जब उनको सन् १९८ में वेस-निकाकेही सजा हुई तब हममें-से कुछ लोगोंने शहियाँ बसा लीं कुछने धक्कर आता छोड़ दिया कुछ जना-सनामें तल्लीन हो गये किन्तु कोई लोकमान्य तिलकके अतिबारा-बराक अनुकरण करनेका साहस बेल जानका साहस उस समय ही न कर सका। यह सबतक न हुआ जबतक संकटीका सावना करतक उसके मजाब अंतराधिकारी और उस उनके कमबीर मोहनरास करमचन्द बापूी शोधमें नहीं आ गये। लोकमान्य तिलकके स्वगवासकी छवि भी विविध कमस मारपूर्ण और सन्तिके समस्त कममेंसे सवान रहस्यमयी है। जिस दिन पाण्डी भी राष्ट्रवापी मर्यादाहकी प्रथम राजनीतिक घोषणा करते हैं मानो उसी शक्तिके लिए लोकमान्यने अपने प्राणोंको रोक रखा था। छियियाँ थीं : मृत्यु छियि और आन्दोलनकी निधि ३१ जुलाई और वहनी अवस्थाकी सन्धि १२ बजे उनके वरदान।

लोकमान्यके विधायक कार्यक्रममें चार मुख्य बातें थीं। विरहकी सहाय्य पर आगे कम-निवासी मनुष्य टॉल्मस्टॉय हों या लोकमान्य बाक बंभावर तिलक उस समय ही बीजना व्यक्त करता ही सम्भव था। माइके कमन

के कितने क्यों बाह्र कसमें साम्यवादी आसन कायम हो सका ? प्रतिभाकी विचार-अनगति को व्यवहारकी जमीनपर उतारनेके लिए समझकी आवश्यकता होती है । युग तो मौसमकी तरह ही चलते आते हैं । मार्गशीर्षमें अमरुत और बसन्त तथा शीतमें ही आम फलते और पकते देखे जाते हैं । हाँ तो लोकमान्य ठिक्कने राजनीतिक जीवनके चार विशेष ध्येय थे । उनमें विद्या-वक कार्यक्रमके चार अंग थे—स्वदेशी आन्दोलन, हाईकोर्ट राष्ट्रीय शिक्षा और स्वराज्य । बहुत पाठकोंसे यह बात छिपी न रहेगी कि अपने विद्यावक कार्यक्रमकी परम साधना करते हुए इन चारों उद्देश्योंको आपूने महात्मा गान्धीने पूरा रूपसे उठा लिया था । लोकमान्य ठिक्कने पाठ भी ये चारों उद्देश्य विरासतमें आते थे । इस देशकी राजनीतिके महान् कुछ पितामह बाबा साईं मीरोजी थे । व. सन् १९-२० में कांग्रेसके अखण्डता अधिवेशनके अध्यक्ष हुए । अपने अखण्डता भाषणमें उन्होंने इन सूत्रोंका उल्लेख किया था । इस तरह सन् १९२७ में बीरबोरोंके इस देशमें पैर रखनेके पश्चात् सन् १-२ में पड़ोसी बाह्र कांग्रेसके अध्यक्षने भारतवर्षकी ओरसे स्वराज्यकी माँगका आचरण नहीं उन्कारण किया था अर्थात् बीरबोरोंके सामने स्वराज्य की बात कहनाम भारतवासियोंको हो-सी उम्मासी द्य लगे जब कि उन्होंने अपनी संयुक्त संस्थाके द्वारा नरम और गरम शब्दोंके समुत्पन्न बहर्षिकी बीच स्वराज्यकी माँग की ।

उनके बारेमें लिखनेवाले एक लेखकने लिखा है कि लोकमान्य स्टूडन्ट्स-मास्टर-सीसे बहुत बिल्कुल पकते हैं । किन्तु इस युगमें भी लोगोंने इस बातका विरोध किया था और आज भी यह बात सच नहीं मालूम होती । लोकमान्य विनोदी स्वभावके थे । एक बार अपने कक्षमें बैठे थे आय पी रहे थे । बच्चे-बच्चियोंको और उनके पिता भी लोकमान्यकी बातचीत कुछ इस तरह हुई,

बच्चा : बाबा हम तो आयके साथ विसकिट खाते हैं तुम आयके साथ क्या नहीं खाते ?

बाबा 'कौन कहता है कि ये कुछ नहीं केता ? मैं भी केता हूँ ।

बच्चा 'रोज ?'

बाबा 'हाँ रोज ?'

बच्चा 'इसको तो नहीं बिलता क्या केते हो तुम ?'

बाबा 'अरे, मैं रोज चायके साथ समाचारपत्रों में ही मयी नामियाँ खाया करता हूँ ।

जब लोकमान्यको सन् १९८ में रूस-निकासन हुआ तब उन दिनों भी मुद्गर माण्डवेमें रहते हुए, वे 'रीठा-रुस्स' की रचना करते रहे ।

लोकमान्य सिलकको समझनेके लिए उनकी बहुमुखी प्रवृत्तियोंकी ओर इबारत ध्यान रहना चाहिए । आर्य जातिमें धीरवकी रक्षा करनेके लिए उन्होंने बेइमं आर्योंका निवास-स्थान आर्कटिक समुद्रक आस पास बसमाया या और विद्वत्तापूर्ण प्रमाणों और एकसे उसे प्रमाणित किया था । इस विषयमें उनका ग्रन्थ है 'आर्कटिक होम इन द बेयार' । लोगोंको कर्म-बोधकी सामान्य बेगके लिए उन्होंने 'कर्मबोध-रुस्स' के नामसे रीठा रुस्स लिखा जिसका अनुवाद पुरव स्वर्णीय श्री बाबबराब सत्रेन किया था । मद्रासमें पुरान मनेछोस्तबकी लेकर उसमें इस प्रकार नव प्राण फूँके कि जिससे आर्कटिक होकर ब्रिटिश नवर्नमेष्टमें फिटनी ॥ बार गये गोस्वर्गका होना रोक दिया । तब तो यह है कि नये हों या पुराने साम्प्रदायिक उपकरण कमजोरीके द्वारा बढ़कर मुनके अनुकूल एक देनेके लिए बाध्य हो जाते हैं ।

जब लोकमान्य माण्डवे जेलसे छूने लगे तब जूनका महीना था । २४ जून १८ को उनको राजा हुई थी और जून १९१४ को छत्र माण्डवे रूस-निकासने के बाद उन्हें छोड़ देना चाहिए था । उन दिनों किनारे ही बातेपानीके आजीवन कड़ी जिन्हें बीस बरसकी उम्र ही जाती थी और वह में छोड़ दिये जाते थे । भारतीय जेलोंके साधारण कठिणोंको भी उन्हें महीने को मजा बाटनेके पदचाप अच्छे आनन्द-वस्तुके लिए प्रतिमात्र प्रायः बार

दिनोंकी रिमायट खर्चमें मिळती है। प्रतिमास वे चार दिन खर्चमें-से कम कर दिये जाते हैं। इस तरह लोकमान्य जब ब्रिटिश गवर्नमेंटकी नजरमें पड़ते बाक-बख्तवाले होते तो उन्हें सात गद्दीने छह दिनकी छूट मिलनी चाहिए थी और इस तरह उन्हें नवम्बर १९१३ की १८ तारीखको छोड़ देना चाहिए था। किन्तु उन्हें डाकू और हत्याप्रेमि भी बखतर माना गया। वे छोड़े गये क्योंकि तारीख १७ जून १९१४ को अर्पाट् उनकी सजा पूरी होनेके केवल छह दिन पहले। सातवें दिन तो उन्हें छूटना ही था। सरकार उन्हें रपूनसे ककड़ता नहीं कायो इसलिए कि सारे बेसम हस्ता मथेवा। समुद्रमें भारी लुफ्तान होते हुए भी उन्हें रबूनसे मझास समुद्रके रास्ते काया मया और मझाससे उन्हें पूना के काया मया। किन्तु लोकमान्यको न छोड़कर यह प्रचार ता सरकारने ही होल दिया था कि जून सन् १९१४ में लोकमान्य छूटेंगे। लोकमान्य राजद्रोहमें जेक गये थे किन्तु उन्होंने जेबरेखों या ब्रिटिश-शासनके खिलाफ जोड़े खम्बोला उपयोग नहीं किया था। उनका एकमात्र अपराध था उनकी भारतवासी होना। कहा यह गया कि कोई मिष्टी अपन बाइसराय-कालमें लोकमान्यको छोड़ देना चाहते हैं किन्तु बम्बईका गवर्नर सिडनहम लोकमान्य तिलकका छूटना पसन्द नहीं करता था। इसलिए लोकमान्य तिलक कांड मिष्टीके जके जानेके बाद बाइसराय कोई हाइड्रिक बमानेमें छूटे। जिन दिनों लोकमान्य तिलकको काकापानी हुआ था उसी दिनों एक मिस्टर मेक्मिथ नामके जेबरेखने स्वयं बाइसरायके खिलाफ अपने 'किंगडटर पत्रमें राजद्रोही केवल प्रकाशित जिय वे किन्तु उसे केवल भी माइकी सारी सजा भी बयी। उसी दिनों अरचिन नामके एक जेबरेख मजदुर-नैठाको प्रत्यक्ष राजद्रोहका बंधा करनेपर और यह स्पष्ट कहनेपर कि मैं स्वयं बिद्रोही हूँ मेरा बाप भी बिद्रोही था राजा और सरकारका हुक्म तोड़ना उनकी जाजा भंग करना मैं अपना पवित्र कर्तव्य समझता हूँ—सजा मिछी केवल कुछ हफ्तोंके कारावासकी। सर एडवर्ड कारसनका उन दिनोंका मुखबरा तो सबपर प्रगट है। कारसनने

हथियार एकत्रित किये बाख्ख और भोके बमा किये और ब्रिटिश राजाके खिलाफ़ परबन्ध किया तो वो उस समयके इन्जीनरके मन्त्रिमन्त्रालने सर की प्रपात्रि छीन कमेके सिवाय एडवर्ड क्वाटरमनका और क्या बिबाड किया ? सर तो यह है कि लोकमान्यकी मन्त्रणाओंका कारण लोकमान्यका राजबोह नहीं था किन्तु मुसलम आरक्षीय जनतामें बिबोह न करनकी कमजोरी थी । उसीके कारण अंगरेज अपराधी मर्कट होकर भी कूय-नीसी सजा पाकर रह जाता था और भारतीय नेता प्रतिष्ठित होकर भी देश-निकासकी सक्त सजा पानेको बाध्य था । नहीं तो ओपोंकी परकानका जो अपराध लोकमान्यपर लगाया गया और पारसी समाजके बसिष्ठ बाबरने जूरीमें मरघेब होठे हुए भी जो सजा लोकमान्यको सुनायी वह बाबर ही के ठकवे अर्पकत थी । स्वर्गीय बसिष्ठ बाबरका लर्क था कि भारतवर्षकी अज्ञानी जनताको मड़काया गया । किन्तु जनता अज्ञानी थी । ब्रिटिश मर्नमेण्टके जनताको अज्ञानी रखनेके बरदानोंके कारण जनता बड़क हूँ नहीं सकती थी और न बड़ नड़की । हम तरह सजा देना अचहीन हो गया । किन्तु इस बिषयमें बड़की आशा मुननके परबात् लोकमान्यने जो कहा वह सचमुच भारतवर्षकी बाड़ी परखनेवाके बेठाके योग्य हूँ था । उन्होने कहा कि जूरी-ने मरघि मुसे बापी ठग्राका है तथापि मेरा अन्तरमा मुनठे कइता है कि मैं निर्दोष हूँ । बापस भी ऊपर एक घक्ति है जो बिम्बका नियमन और न्याय करती है । उसकी इच्छा है कि मैं बसट मोयूँ और जनताको साथ पहुँचाऊँ । और आज इस बातसे कील इनकार करेगा कि लोकमान्य त्रिलकटे परबात् महारजा पान्थीके मान्थीलजन बरबो ठकके लिए भारतकी ब्रिटिश जेनोंको विरुदा नही बना दिया था ?<sup>६</sup>

उन दिनों लोकमान्य त्रिलक अंगरेजोंके लिए महान् मर्कटता थे । जब लोकमान्य बलकला कपिछेरी लौटे तब इलाहाबादमें उनके स्वागतके लिए सजा भी बयी । इन परिस्थितियोंके कारण उन दिनों प्रयागमें था । जनको समाके गए एक बिदाक्य मरघका कमरा अपिचारियों-द्वारा हूँ बरनके बार

को नहीं दिया गया। एक नरम नेताने उस सभाके लिए सतरसियाँ भी नहीं मिलने दीं। परिणामतः सभा एक सत्रजनके निजी खर्चसे हुई। उस सभाकी सफलतापर तत्कालीन ब्रैगरेजी सरकार-समर्थक और उन दिनों तक ब्रैगरेज-द्वारा सम्पादित 'पायोनिवर' इतना नफ़्फ़ा कि उसने आरक्ष्य और क्रोधसे किञ्च भरा कि एक अग्रान्धिकाकी सभाम तीन हजार बाबनी। उसने उस समय तत्कालीन ब्रैगरेज सरकारको भी बड़ा-बुरा कहा था। किन्तु उसी ब्रैगरेज सरकारको बाल्मी-मुचन शासन-प्रवर्तनीको सबसे सहायकके भावना सुनने और बिजोही जनताकी छावनोंकी उपस्थितिके दिन देखना पड़े। तब उसी बीरवर मुचाप बोलेके कथने ब्रैगरेजके किताब बुद्धत्वमें संश्लिष्ट तत्त्वस्थ बिजोही भी देखना पड़ा। लोकमान्य और महात्माजीने जो जोन विरोध देखते रहे हैं वन्हीने न लोकमान्यको पहचाना न भारतवर्षको।

'लोकमान्य' इस केन्द्रीय प्रसिद्धा परिण और वातनामकी स्वराज्य प्रावनाकी जनधरत सिद्धिका सम्पत्तिक नाम है। बाल्मीको सत्र और अहिंस-को मानकर बने, और लोकमान्य इस देशकी अवतार-परम्पराके अनुकूल बहू बाना केकर बने कि बहू देशवस्त होना या भारतवर्ष स्वतन्त्रताका दम्भक होना बहू बहू लोकमान्य तिलकका सहाय प्राप्त रहेगा बने ही बहू किन्ती बलमें हो। ४ नवम्बर १९१९ की ब्रिटिश मजदूर दलके नेता तथा 'डेसी हेररड' के सम्पादक श्री मालसबरीने उन्ही किञ्चा था आप जब इंग्लैण्डमें वे उस आपके साथ काम करनका वीरव और मान्य दोनों मुक्त मिले। आपकी अपने देशके प्रति निष्ठा सचमुच अपूर्व है। हम और आप सबे ही दो हीने अन्तरमनमें ता हम एक ही हैं। कर्नल बैजउदल अपने ९ नवम्बर १९१९ के पत्रमें किञ्चा यही इंग्लैण्डमें वर्ष-द्वेष कम डीठा का रहा है और भारतवर्षमें वारी गोपोंकी बहुप्यता अब नहीं बनेगी। किन्तु बैजउद महाशयने यह भी स्पष्ट किञ्च दिया था कि 'मजदूर दलके घरोसे रहना भी बहुत मुद्रिपताकी बात नहीं है। कम यदि

मजदूर दलका मजिदमजदूर बनें तब भी बात तो बड़ की बड़ी रहेगी । मैं अपने ही दलके सम्बन्धम इतनी कटु बात किर्नू, इसका मुझे भी दुःख है । किन्तु इस परामें भी आश्चर्यपर बलनबाके लोग बहुत कम हैं ।

इस समय में स्वातन्त्र्य कीर आचरकरकीके भाई भी मनेध दामोदर सावरकरके एक पत्रके कुछ भाग्य लक्ष्मण करना चाहूँगा जो उन्होंने फरवरी १९२० का कयाकित् अष्टबलसे लोकमान्यके पाठ पहुँचाया था । इसमें बह भी लिखा था कि साक्षात्परके अन्तर्गत स्वराज्यका ध्येय हम लोगोंको बुझा करना—जैसा नहीं समझता । यही नहीं वह तो जान भी हमारी जाकासाओंका ध्येय है । अधिक क्या हमें या समझता है कि बिराज-बन्धुत्व भी जाना चाहिए । सम्पूर्ण पृथ्वीका एक ही राष्ट्र एक ही स्वर्ग-मुक्त एक ही बरके पारिवारिक और इस लुष्टिके सब पराधोंका लाभ सबको समानतासे मिले—हुमाय यही मत है ।

इन पत्रम साम्प्रदायिकता दिनु इत्यादिवा आदिका कही नाम नहीं । लोकमान्यके नाबर १५ अप्रैल १९१९ की मिस्टर ऐटलीका जो पत्र आया था वह लूल-लूलकी दुष्टिसे बहुत महत्त्वका माना जाना चाहिए क्योंकि उस पत्रके लिखे भागके अद्वाइठ बर्ष और बार महीनेके पत्रवात् स्त्री ऐटलीके ही प्रभाव-मजिदमजदूर भारतवर्षको स्वराज्य प्राप्त हुआ । उन्होंने अपने पत्रमें एक वाक्य यह लिखा था कि 'ये भावनासे होम-बलर हैं ।' यह लोगोंको ध्यानमें होना ही कि स्वराज्यकी हलचलको और अधिक बलवान् बनाने के लिए लोकमान्य तिलकन उन दिनों आम्बोलनकारी भारत-वागियोंकी बल्य कामम की थी होम-बल लोग और स्वराज्य बान्धने लोकमान्य तिलकके स्वर्णबासके एक मात पहले ही होम-बल लोगकी अभ्यधता स्वीकार की थी । भी ऐटलीके पत्रका दुष्टय भाग्य भी मैं लक्ष्मण करना चाहता हूँ वह है वह तरह हीन बहुत है कि जातेके कुछ बयोंमें बिराजके जनक लोगोंका ध्यान भारतवर्षकी ओर आदवा ।' इतनी दूर-दुष्टि-का पत्र लोकमान्यके बिदेसी बन्धुबहुराजकीमें पामय ही बिदेसी





दिने ही समझ काम करते थे। लोकमान्यके बलके हिन्दी-अपुर्में काम करनेवाले बलवान् व्यक्ति रहे हैं साहित्य-भाष्यपति आचार्य वं अम्बिका प्रसाद वाजपेयी। उनकी देखनी 'भारत मित्र' के हाथ तथा उसके पश्चात् भी उस राष्ट्रीय तेजस्विताको व्यक्त करती रही है जिसका लोक-मान्य तिलकके युगमें अभिव्यक्त हो चुका था।

लोकमान्यके मृतका समर्पण जैनरेवी हैमिकोंमें 'अमृतवाहार चरित्र' तथा इसके विषये और पत्र करते रहे। हमें यह सर्वत्र ध्यानमें रखना चाहिए कि महात्मा गान्धीने लोकमान्य तिलकको पश्चात् उनके स्वाधीनताके संकल्पको पूर्ण किया और लोकमान्य तिलक को देशप्राप्ति के लक्ष्य और प्रसाद तथा स्वराज्यको जो उल्लेख इस देशमें छेड़ पड़े थे उस मुकामको यदि महात्मा गान्धी-जीसा चतुर मार्गदर्शक न मिलता तो भारतीय स्वतन्त्रता विस्तार करनेवालों और तेज करनेवालोंका एक अनवरत उद्योग मान ही बनी रहती। जिस पीढ़ीमें स्वराज्य प्राप्त किया है उसमें महात्मा गान्धीकी भुजाओंमें खेलकर प्राप्त किया है किन्तु उसका उत्तराधिकार यह है कि वह लोकमान्य तिलकक कन्धोंपर बैठकर जारी थी।

चरित्र निर्मीयता और राष्ट्रके बलके लक्ष्य पद्मनगरी लक्ष्मी विदेहाके भारतीय आन्दोलन भारतीय स्वतन्त्रताके विदेही आन्दोलन के लक्ष्य लोकमान्य तिलकके प्रेरणा और सहायता मिलती रही। एक युग था जब स्वर्गीय अरविन्द नाथ और उनके बलके अन्दरों समयक देवना लोकमान्य तिलक थे और वे सब उनके अनुयायी थे। भारतीय स्वतन्त्रताके लक्ष्य लक्ष्मी विदेहाके आन्दोलन।

# महात्मा गान्धी

२

महात्मा गान्धीको सबसे पहले मैं कन्नडकी काँग्रेसमें देखा था । उन दिनों वे मोहनदास करमचन्द गान्धी कहलाते थे । देशकी राजनीतिक सूत्रधार मरम बककी तरहसे उन बिना घर छोड़कर बाहर मेहता थे । वे कन्नड भाषे में हुए थे । सुरुआतमें सन् १९७ में सगडा होनेके बाद काँग्रेस घर छोड़कर बाहर मेहता और स्वर्गीय योपाककुप्प गोबिलके मरम बकके हाथों की और कन्नडमें ही मरम और घरम दोनों चल मिले । धूसरी ओर देशकी नयी पीढ़ीका भाव्य विधायक मरम बक था । उस बकके मठा लोक-भाव्य बाल गंगाधर तिलक थे जो काल पानीकी सखा काटकर बर्साकी भाव्यकेकी जेबसे ताब ही भावे हुए थे । तीसरी तरह पाग्वीजी वे जिनके एक-एक घण्टेकी जल-जीवन सुनता था और मानता था । उन दिनों महात्मा गान्धी 'कर्मवीर' कहलाते थे । उन्हें लोग कर्मवीर मोहनदास करमचन्द गान्धी कहते थे । गान्धीजी काँग्रेस ईम्पमें भी अपने सिद्धांतक अनुसार बककी पीछे रहे थे । एक बीरिस्टर और इतना बड़ा मठा बककी पीछे इससे आगेकी कोई भी नहीं हले हुए नेताओंकी मुखा-सी हाथी की और राष्ट्रीय मठा गान्धीजीकी उपेक्षा करते थे । किन्तु धार्मिक उन्हें देखना चाहते थे । जानता चाहते थे उनपर कुरबान आते थे । जब महात्माजीसे स्वर्गीय भाई जनेशचंदरजीने कामपुर जानेकी कहा तब निमन्त्रण स्वीकार करते हुए गान्धीजीन कहा हाँ कामपुरके और भाई भी मेरे पास भाव्य थे । उनसे मैंने तो कहा है कि 'प्रताप' का सम्पादक जनेशचंदर विद्यार्थी भावे तो बात करके बहाल हुआ । तो जब मैं कामपुर आईगा । पर मैं तुम्हारे ही पास आऊँगा । भाई जनेशचंदरजीने कहा मरे उपेक्षामें तो बूम जड़ी

है। इस कानपुरके लोग आपको बहुत अच्छी जगह टहलार्ये। बाग़बीजी बिकसितकर बोले 'हाँ, मुझे अच्छी जगह नहीं टहलता है मुझे तुम्हारे हो पास टहलना है अच्छा जगहों देर हार्ता है। उसी समय मन्नेयजी तथा इस सब बातें चठकर चले गए। चौथ ही दिन मैंने बाग़बीजीको प्रताप प्रसन्न देखा। वे उस समय पत्र लिखनम व्यस्त थे। एक साधारण-सी कलम की आलपेनको जगह कबुतके कांटे रले हुए थे। और प्रताप प्रसन्नके नसपर उनके कपड़े भूल रहे थे। चौथासि मिन्नका समय होते ही उन्होंने अपना मिन्नना बन्द कर दिया और चर्चा करने लगे। जो प्रश्नोत्तर हुए उनका कुछ अंश मेरे पास या सुरक्षित है। प्रश्न कभी मन्नेयजी करते और कभी कानपुरके विरोधाधिकारक डाई स्मूथके हुए मास्टर भी पर्यन्त। मैं केवल मनचर्चाके प्रश्नोत्तर ही दे रहा हूँ।

प्रश्न : मैं और मेरे विद्यार्थी ही निम्न सार्वजनिक अन्तिम विचार करते हैं। बाग़बीजी बाग़ ही में बाक "ही तो ता ठीक है। मैं भी अन्तिम विचार करता हूँ किन्तु मैं उस अन्तिमकी गहरी समझ सकता या अन्तिम अपने लिए भी जाती है और औरोंको बाधने कीवश है। कहावत है कि ईश्वरमाया ही लुप्त करकर ही बना जा सकता है।

प्रश्न : सब तो आपके कार्यमें सार्वजनिक अन्तिमविचारोंकी तथा राष्ट्रीय दमके लोगोंकी सारी महत्त्व भरबाध हो जाती है ?

उत्तर : असाध्य का हुआ है वह यही कि एक-ही आदमी सारे गये हैं और बिदेसी राज व्याका-र्यों बलवान् हैं। मेरे नामों आपके प्रयत्न कर बाध नहीं पावे। एक तो बेमयी हिम्मा हरेबी और दूसरे जिन काममें देशकी बहुत देर लग रही है मेरा ता विचार है कि वह जल्दी हो जायगा।" समय को महारमाजीके इन उत्तरले मैंने ही चले। उन्होंने कहा : 'अबरेड इनने सीधे नहीं है कि कार् प्रयास न करनपर वे भारतवर्षको स्वराम्य दे दें।"

बाग़बीजी 'यह मैं कम कहता हूँ कि बिना प्रयासके कुछ मिलेगा। मैं तो कहता हूँ कि इन देशके जन-जीवनकी प्रयास करना नहीं है। सारी

करनी पड़ेगी किन्तु आज दूसरोंको मारकर नहीं स्वयं मरकर । मारनेमें क्या सपता है, मैं भी तुलवारसे घसे काट सकता हूँ किन्तु औरतोंसे घसे काटने की यथेष्टा अपनी निबळता अपनी मित्रक अपनी कायरता और अपने बड़े बननेको इच्छाको काटना बहुत मुश्किल है ।”

मैंने देखा यथेष्टाजी गांधीजीके कंधनसे सम्पुष्ट नहीं हुए । यथेष्टाजीक सामी भी नहीं किन्तु यह मुझ सोच परसे कि प्रेरणामयी वाणीमें वास्तववादा कोई नेता हमारे बीचमें है और इसीलिए हम सबने मित्रकर गांधीजीको प्रणाम किया और बिदा ली ।

गांधीजीको एक बार मैंने खेडामें देखा । उन दिना लड़ाका सन्धा यह बल रहा था । बहुत सोचता हूँ याद नहीं आता कि बल्कमभाई वहाँ थे ? कुपलानीजी थे । गांधीजी बीमार हो गये । हस्तकी बीमारी थी । मुकसीदासने एक जगहपर मयबान्के पछानेपर लिखा है,

“प्रभु सप्रम पक्षतानि सुहाई  
हरहु भरत मम के कुटिलाई ।”

इस भावनाका प्रत्यक्ष प्रथम दर्शन खेडामें हुआ । अपने बीमार हो जान के कारण गांधीजी पश्चात्ताप करते हुए कह रहे थे ‘मैं तो ऐसा कहूँगा कि मैं मयबान्के सामने मुनहगार हूँ । इतने लोपोंको खट्टा कर दिया सत्याग्रह बका दिया । लोग धेन्ध्राल जा रहे हैं यकर्ममेष्टका बउसर तो खेडके किसानको बुद्धमन-ईमा देखता है और किसानोंको ऐसी हाकलमें छोड़कर मैं बीमार पड़ गया । उस समय ऐसा लगा कि बीबनकी प्राकृतिक बटिनाइयोंको भी अपराध कहनवाके और अपनेको खरा नी नहीं राना करनेवाले महान् सन्तके दशन हुए । उस समय ऐसा लगा कि मयबान्के किसी सच्चे भक्तके दर्शन हो रहे हैं । गांधीजीकी बीमारीमें यह तथ हुआ कि वे लोपोंसे अधिक मिर्छे-जुलें नहीं और किसीको उनके पास न जान देनेके लिए कुपलानीजी रवानाके दरवाजेपर जा बैठे । उस समय मैंने कुपलानीजीकी बाग्यी-मक्ति और गांधीजीका कुपलानी-प्रेम अद्भुत रूपमें

देखा। कृपलानीजी बोला तो जो कुछ भी मुँहमें था बाये होलते जाते थे। और गांधीजीक प्रति बड़े-बड़े व्यक्तियोंका उपयोग करनेके बाद भी गांधीजी इस प्रकार बैठते थे मानो कोई इनका प्रिय भजन गुना रहा हो। जब समय उनकी स्थिति ऐसी हो गयी थी कि

‘सिखा का सराही कि सराहा कुत्रसात को’

एक बार लोकमान्य तिलकके साथ गांधीजी सम्मेलित मिल हिम्मत काँपस कमेट्रीकी बैठकमें था रहे थे। यह १४ जनवरी सन् १९२ की घटना है। जबकपुर स्टेशनपर मेक ट्रेन काटती हैर तक ठहरती थी इसलिए लोगोंने स्टेशनपर ही एक सभाका आयोजन किया। लोकमान्य तिलक ट्रेनसे उतरकर सभामें आये आपन जी किया। गांधीजीसे सादर किया किन्तु वे उतरे नहीं। उन्होंने स्पष्ट कहा मैं बीरका कहना नहीं मानूँ। आप वहाँका काम कीजिए किन्तु मैं आपकी शर्माँ जाकर व्या-स्यान देनेका शक्य काम नहीं मानता।” परिणाम यह हुआ कि गांधीजी स्टेशनपर साबाह हरिजन-जठारकी बर्षा करते रहे और जबकपुरकी बस्ता आपनमें बीटी प्रतीक्षा करती रही।

सन् १९२१ के मार्च महीनेके काबू पोबिन्धवासी तथा मिर्जाले कहा कि मैं बर्षा जाकर गांधीजीको जबकपुर ले जाऊँ। गांधीजी साथ आये। बसना मसलको बड़ाव भी था। जब वे सीन माटरी नामपुर होकर जबकपुर रवाना हुईं तब मैं सिवनीमें महारवा गांधीकी माई दुर्गादेवकी मठ्याके मार्ग टहरा दिया। मेहताजीक मार्ग गांधीजी और तमस्त रुकके टहरनेकी बहुत अच्छी व्यवस्था भी गयी किन्तु जब सिवनीसे मोटरीं जबकपुरके लिए रवाना हुईं तब प्राममें माई बसनावासीजीन मुतावर इन बागके लिए माटरी प्रवृत्त की कि जब मेहताजीक बकासत नहीं छोड़ी है तब गांधीजीक उनके मार्ग टहरना कथित नहीं हुआ।

यह सुनकर किसी तरह माई दुर्गादेवकी मठ्याका काम नहीं। उन्होंने (चूँकि उनके बाद ही मैं जेल बना गया था) अपने बकासत छोड़नेकी

कवर मुझे दिवापुर जेलमें भी और उस दिन राष्ट्रीय क्षेत्रमें धानेके पत्थातु मैहताजी आकाशक प्रखर क्रांतिवादी बने रहे। इस बीच एक विमोचक प्रसंग मान आया है। मैं भूक गया हूँ कि यह घटना कहीं हुई। महात्मा गान्धी जिस भवनमें ठहरे हुए थे उसके बालक कमरेमें स्वर्णमय बिट्टकमाई फेंक ठहरे हुए थे। उस समय 'लेजाभी सड़त' गुजरती प्रत्येक केसक थी छंकर कात्तबी पापीक भी वहीं ठहरे हुए थे। बिट्टकमाई उस समय सिमरेट दी रहे थे। महात्माजी हँसत हुए बोले जो कि उनके सिमरेटपर बहुत आनंद बावक व्यर्थ था। केम बिट्टकमाई धुँकरि रह्या जो ?' बिट्टकमाई स्वर्णको तुरन्त लाड़ कम बोले "कपिलके प्रस्तावका पालन कर रहा हूँ। छंकरकात्तबी दरते दरते पुनरातीमें बोक बडे बिस्का बच था यह कैस ?" बिट्टकमाई विस्मयाकर अपना हाथ अपने धिरसे लगाकर बोले 'बरा कपिलका प्रस्ताव देखी मेहरबान तुमने विस्मावती चीन्हाका बोल फयर बास किया है और मैं विस्मावती चीन्हाका बोल फयर कर रहा हूँ।' ऐसा कहकर उन्होंने एक हाथस अपनी बिट्टकमाई बाड़ीपर हाथ फेरते हुए दूसरे हाथकी जलती हुई सिमरेट मूँहमें डेते हुए बागका कमर छोड़ा और बातावरण हँसीसे भर गया।

मायकर्मने एक बहुत बड़ा ब्रह्म एक बहुत बड़ा ज्ञापि एक बहुत बड़ा माया एक बहुत बड़ा कवि जो दिया जो चिन्तनकी चक्रियाँकी कम द्विधामें उल्लिता था तब बानीसे बोलता था। लोक-जीवनकी कदनाके कोटि-काटि स्वर पुण्यायके संकेत बनकर जिसकी बायीमें फूट पड़ते और जिसकी क्रियामें टूट पड़ते थे विरचना एसा बनहोना काव्य हमन जो दिया। उसकी कल्पन कम जलती भाषाका सुहाय और देशका भाष्य लिखती थी। देशकी बलिष्ठ पौढ़ियाँ उसके अन्तःकरणमें पुकार जलती थीं। येना न हाते हुए भी जिसकी बात राजाशाही तरह पालन को जाती रही न होते हुए

भी जिसकी बात बर्माणाकी तरह घटतक झुकाकर स्वीकार की जाती स्वर थापुक न होते हुए भी जिसकी बात गुनकर सहस्र-सहस्र प्राणियों और घट-घट संस्कारोंकी रक्षाके लिए धन बरस पड़ता और प्रियतम और प्रियतमाका पावकपन न होते हुए भी जिसका ईमान और बलिदान जिसकी कौति और मूर्ति पीछियोंमें छुछरायी जाती उसे हमने जो दिया । जिसके नभमें दुखियोंकी चीत्कार घर जाती जिसकी साँसेमें जकरतमन्त्रोंकी लंकार गुनायी पड़ती जिसकी पुत्राये जिसके परिवर्तनकी मनुहार होती और जिसके स्वरमें साम्राज्योंको कम्पित करनेकी हुंकार होती उसी महान् मानव-काव्य बनना काव्य-मानवको हमारे देशकी युधिने कम दिया और जो दिया ।

## महात्मा गान्धी

२

सन् १९२ के सितम्बर महीनेमें कमरुतामें स्पेशल कांसेस हुई। लोकमान्यके स्ववासको कुछ ही दिन हो पाये थे और पान्थीजीके कलके अनुसार ही यदि कोई व्यक्ति है तो भारतीय स्वतन्त्रताके लिए प्राथमिक दिन और रात निरन्तर बीन रहता है और अपनी सम्पूर्ण शक्तके साथ यह सोचता रहता है कि भारतीयके लिए मुक्ति प्राप्त की जान तो यह व्यक्ति है लोकमान्य तिलक। लोकमान्य तिलककी मृत्युके बहुत दिन पूर्व एक बार महात्मा गान्धीने यह भी कहा था कि 'भारतीय स्वतन्त्रताके लिए लोकमान्य तिलककी अति आवश्यकता है यदि वे इस समय ही न रहे होते तो मैं पूरा यकीन है कि इस बात ने भारतीय स्वतन्त्रताके सम्बन्धमें ही कुछ सोच रहे होते या किसीके साथ उसी विषयपर बहुत कर रहे होंगे।

लोकमान्यके स्ववासकी खबर पाकर कलके छात्रों में एकदम निकल पड़ा था 'इसके आन्दोलनकी कठिनाइयोंमें अब मैं किसके पास जाकर सलाह कर्ना और सहयोगता प्राप्त कर्ना। अब मैं किसके पास जाकर कहूँ कि सम्पूर्ण महाराष्ट्र इस क्रममें लग जाये। अतीत में स्वतन्त्रताके लिए काम करते हुए भी स्वतन्त्रता प्राप्त मुझे नहीं मिल सकी थी परन्तु अब मेरे लिए आवश्यक हो गया है कि मैं लोकमान्यको आवाज को समझने में सक्षम जानें। मैं उनकी आवाजको भीषित और प्रभाव दीक रहूँ। हमारे इस महान् मोड़ाने भारतीय स्वतन्त्रताकी जिस पताका को डेबा रखा उसे एक धक्के लिए भी सुजने नहीं देना है।' पान्थीजी महाराजवासे एकदम धम्बाई पहुँचकर लोकमान्य तिलककी स्वर्णरोहण नाममें धार्मिक हो नहीं हुए वे प्रत्युत उस समयकी अपार बीड़के बीचमें



लोकमान्यको काँबा भी दिया था ।

कलकत्ता कांग्रेसके बाद मद्रास गांधीके कार्योंकी विवेचनाको जाननेके लिए समयकी पुस्तकके पाँचसे पन्ने पोंछेको पलटने पर्य्यै । वर सन् १९०९ में कलकत्ता कांग्रेस हुई थी तब उसके अध्यक्षके नाते गुजराती मातृभाषा वाले किन्तु देशको स्वतन्त्रताके परम नायक भारतीय राष्ट्रके प्रतिष्ठामह भी हजामाई मोरोजील सबसे प्रथम अपने अध्यक्षीय भाषणमें स्वराज्य प्राप्तका उन्मूलन किया था और उस समयके सात तीन बातोंको और मिलाया था । हम तरह से कुछ मिलाकर बार बारें थीं स्वदेशी मान्यो स्तन बिदेनी बाँकट राष्ट्रीय शिक्षा और स्वराज्य । लोकमान्य ठिठकने अपने भाषण-द्वारा वक्तव्य-द्वारा और मराठी 'केसरी'ने किये अपने कैबिनेट-द्वारा इन बार बातोंपर बहुत जोर दिया था ।

भारतीय स्वतन्त्रताके आन्दोलनका इतिहास जाननवास्तविक यह बात ठिथी नहीं है कि लोकमान्य इन्हीं बार बातोंके लिए जीवन-भर लड़ते रहे । उन दिनों एड होम-कल जीप धोयती स्वर्णीया एनीकेलेष्टके द्वारा बलाबी का रही थी और दूसरी होम-कल लीकका संघात्मन स्वयं लोकमान्य ठिठक कर रहे थे । लोकमान्यका स्वभावस हीते ही गांधीजीने स्वराज्यन आन्दोलनका वह भार अपने तिरपर उठा लिया । व होम-कल लीकके अध्यक्ष चुन लिये गये । उन समय कलकत्ता विधेय कांग्रेसके अध्यक्ष पंजाब-नैसरी स्वर्णीय लाला लाजपत रामने कहा था 'मेरा हृदय गांधीजीके साथ जाता है और मेरा महिम्न दूसरी ओर जा रहा है । गांधीजीने अपनी नवीन अहिंसक योजना 'बुर्जु' देशके सामने रख दी थी । उस समय कलकत्ता स्पेसक कांग्रेस में गांधीजीकी अहिंसावर प्रथमका व्यंग्य करते हुए अध्यक्षके देशभक्त बैरिस्टर बेट्टिस्टान अतिथि भारतीय कांग्रेसकी सम्मेलन समीचीनी\* बैठकमें कहा था 'आपके अहिंसाके आन्दोलनने देशका स्वराज्य मित्रता ही दूर, अंगरेजारा

कोई कुछ भी नहीं बिगाड़ सकेगा। आप स्वयं ही जम्हायबस्ता बढ़ने बेनेके बजाय अहिंसाके माथपर एक छात्र 'पुलिश मीन' का काम शुरू किया करते हैं और प्रकारान्तरसे देशकी व्यवस्था रखनेमें अंगरेजी शासनकी बल पहुँचाते हैं।

इस लोग सब उन दिनों लोकमान्य तिलकके शब्दके नीचे स्वराज्यका आन्दोलन करनेका काम करते थे अतः गान्धीजीकी बात उनकी अहिंसानी बर्बादिके कारण लोकोकी समझमें बिझुक्त नहीं जाती थी। मैं यों कह सकता हूँ कि सारे देशमें ठहरा तो बंबला-निवासी (अब स्वर्गीय) हरिदास बटवर्माके कैम्पडाउनस्ट्रीटवाले मकानमें था। मेरे साथ ठगुर लमनसिंह चौहान थे और आपके मध्यप्रान्तीय मन्त्रिमण्डलके मन्त्री श्री मन्मुक्तासिर सिहोकी मुझे खूब याद है। मेरे साथ ही कमकता गये थे और कमकतासे लीये थे। उन दिनों वे बंबलाकी शासनिय माध्यमिकशाळाकी जम्हायकी छात्रकर मुहानपुर बसे गये थे और बकायत करने लगे थे। मोक्ष ऐसा आया कि बकायत करत ही उन्हें महारमा गान्धीके आन्दोलनके अनुसार बकायत छोड़नी पड़ी। उस समय कमकतासे महारमाजी कहाँ छूरे हुए थे वहाँकी व्यवस्था स्वर्गीय माई जमनाकाजजी बजाइके हाथमें थी। मैं अब अपने मित्रोंके साथ कमकतासे महारमाजीके कमरमें गया तब वे कुछ मित्रोंसे बातचीत कर रहे थे। काँच लके महारमानी लखनऊक एकबोकेट पण्डित बोकबनाच मित्र उनकी बाजूमें बैठे हुए थे। और बातचरनमें उस्तासकी अपेक्षा नवासीगता छापी हुई थी।

जोय स्वराज्यके आन्दोलनको खूब समझते थे। किन्तु अहिंसासे बहुत पहराये हुए थे। गान्धीजीने अपना दृष्टिकोण समझाते हुए यह बताया कि एक बार जमनमें जाकर देखिए तो आपको पता चल जायगा कि अहिंसाकी शक्ति ऐसी है जिसका सामना हिंसाकी शक्ति कर ही नहीं सकती। हाँ हाँ तो जाइए वह सच्ची अहिंसा। नकली अहिंसा तो हिंसा ही अधिक हानिकारक है। मुझे लया कि यह अहिंसा तो अपने कुत्तेका रोय नहीं है। किन्तु अब काँचलक मंचपर चढ़कर महारमा गान्धीके अपनी

अहिंसावादी बात कहते और योग्यता समझाती तब भागी प्रचण्ड करतल-  
 ध्वनिसे पन्डाल पुँजा दिया और महारमा गान्धीजी की बातका समर्थन किया।  
 उस समय कितने ही सोच तीन बातें सोचत थे। एक एक यह था जो  
 सोचता था कि अहिंसा गान्धीजीजी की सनक मान है, यह बिसफुस नहीं चल  
 सकती। कुछ लोग यह सोचते थे कि अहिंसापर और देनेसे कापेस बिहार  
 कायेनी और उसकी प्रत्येककी छवितर्फी कापेस छोड़कर बनी कायेनी।  
 तीसरा एक एक ऐसा भी था जो सोचता था कि क्वाकिन्स महारमाजी  
 स्वयं अहिंसापर विस्थाप नहीं करते बरकस राजनीतिक अनुपातिक कारण  
 अहिंसापर बोर है रहे हैं। इस तरह सोचबवालीमें भारतवर्षके छितर  
 लोग हैं अथिक् थे। इस सोच सब कम्पकतासे मीटते यह यह प्रभाव लेकर  
 बने कि बनता महात्माजीका साथ देनेके लिए तैयार है और बुरे मता नहीं  
 मानते कि अहिंसासे काम बल सकेगा। उसी वय कापेसका अधिवसन  
 जो प्रतिकर्ष विचम्बरकी छुट्टीमें हुआ करता था हमारे प्रान्तमें नावपुर ही  
 में होनेवाला था और उत्तर और दक्षिणक विभाग नेता अहिंसाको हुराने  
 की प्रतिज्ञा-नी लेकर कलकत्तासे बने थे। किन्तु देतके भी नये नेता ने  
 ने स्पष्ट गान्धीजीके साथ दिखायी देते थे। उस समयकी तीन महान् सम-  
 स्पाएँ थीं सिक्काफठण्ड जनहा मुमकमनके पूर्ण लक्ष्यके साथ निरपे  
 भारतवर्षकी स्वराज्य मिले तथा भारतका कानून रह क्रिया पाये।  
 उन दिनों महारमा गान्धीके काम-कर्ममें कौन्सिलका बहिष्कार एकमक  
 रमान बचाकस कस कापेसका आन्दोलन धामिक था। किन्तु गान्धीजीकी  
 विरोध तो दूर कलकत्तेमें मीटते न मीटते लोमीनि अपनी कौन्सिलके बहि-  
 ष्कारकी बौधमामोंको बुर मना हो और बम्बई प्रान्तमें सबसे पहले कौन्सिल  
 छोड़नेवालोंमें स्वर्गीय बैरिस्टर वेप्टिस्टा और मोकमामके परम दिव्य  
 स्वर्गीय तरसिह बिन्ताथिनि बेलकरजी ब। उस समय छवति जिनके हाथमें  
 बौधम जो उन पशाबिचारियोंकी नीयत तो यह थी कि कापेस महारमा  
 गान्धीके असहकारिता आन्दोलनके सिक्का बन दे किन्तु सरस्य वय

बिकारियोंके झड्डके बाहर वे खीर बनता लुके आम असह्यीय बान्धीजनसे हर्षित हो रही थी ।

नागपुर काँग्रेसमें मैं उसी मकानमें ठहरा हुआ था जिसमें ठगरेके हिस्सेमें बापूजी ठहरे हुए थे । उस समय सम्पूर्ण भारतीय जीवनमें एक हलचल प्रारम्भ हो गयी थी । १९८ में जब माधपुरमें भोज किसी राजनीतिक परिषद्में एकत्र हुए थे तब मोक्षनाथजी तरुण ध्यान देनेसे मानस होता था कि ब्राह्मण-अब्राह्मणवादका कितना बड़ा खोर है । जब जीवन ठगरे हुआ तो जो जोय सोका नहीं पहन हुए थे उन्हें अपवित्रोकी तरह दूर बैठकर भोजन परोसा जा रहा था । जब १९१५ में लोकमान्य छूटकर आये उसके पृथ स्वर्गीय विष्णुदत्त मुक्तके सम्पादितत्वमें जो अखिल भारतीय राजनीतिक परिषद् नागपुरमें हुई उसमें सोका पहनने और बिना सोका पहननेवालोंकी पंक्तिकी आगने-सागने बैठें किन्तु जब नागपुरकी काँग्रेस हुई तब पान्थीजोंके मुखका यह प्रमाण था कि भोजनकी वस्तुओंमें श्रेष्ठता आ गयी थी और मनुष्य मात्र भोजन सम्मिलित था । बान्धीजीके मुपकी महिसक असहकारिताके जमानेकी यह पहली काँग्रेस थी जिसमें कमल बैजवड और मेजर एटकी (जो आगे जाकर ईश्वरके मजदूर प्रधान मंत्री हुए तथा जिनके जमानेमें भारतवर्षको स्वराज्य प्राप्त हुआ) भी काँग्रेस देखनेके लिए प्रथम बार काँग्रेसमें सम्मिलित हुए थे । मैंने देखा स्वर्गीय माई जमनालालजी बहादुर जो नागपुर काँग्रेसको स्थापन-समितिके अध्यक्ष भी थे काँग्रेसको सफल बनानेके लिए बहुत चिन्तित थे और महार्मा बान्धी माना देसकी परम शक्तिपर विरवास करके अत्यन्त निश्चिन्त थे । मैं उस जमानेमें मध्यप्रदेशको प्रांतीय काँग्रेस कमेटीकी सम्पूर्ण ध्वनि इस बातमें लयी हुई थी कि असह्यीयका प्रस्ताव काँग्रेसमें स्वीकार जाये किन्तु असहयोगके पक्षमें रेष-भारमें हल्ला मचा हुआ था और लोक-भोजनमें ऐसा प्रतीत होता था मानो स्वराज्य मजबूत होइता जका जा रहा है । यद्यपि महार्मा बान्धी बार-बार उपदेश कर रहे थे कि बिना सोचे-विचारे

असहयोगके प्रस्तावका साथ न हो किन्तु लोच तो गान्धीजीके प्रस्तावपर मत देनेके लिए चलावके हो रहे थे ।

एक दिन सम्मेलनके समय अपने गांधीपुरके निवास भवनमें गान्धीजीने सब कांग्रेस कार्यकर्त्ताओंको बुलावा और कहा कि मेरे कार्यापर सबर भाषी हैं कि आप लोको ( गान्धीजी उस समय लोककी 'लोक ही उद्धारक करते थे ) लूँ जो अहिंसाका मूलमूल समझाते हैं उसमें लोक ठाठियाँ खूब बजाते हैं मगर उसमें सहर तो होता है । मुझे हिंसाका स्वराज्य तो नहीं चाहिए और अगर हिंसाका लोक हिंसाके बिना स्वराज्य नहीं चाहिये तो मैं तो लोकों लूँ छोड़कर बाहर निकल जाऊँगा । इसीलिए अब आप लोक अपने भाषकोंमें-से सहर निकाल लीजिए । गान्धीजीके इनका कहते ही 'हम कांग्रेसके महान् वक्ता गण एक-दूसरेकी सूरतें देखन लगे । उस समय स्वामीय विजयसिंहजी पब्लिकन राइट सभ्योम बहा यदि हम गान्धीजीको प्रह्व कर्ना चाहते हैं तो समूचा ही प्रह्व करें—ईमान पुराना और योजना नयी उस जोड़ते तो काम नहीं बसेगा । इसके परवान् बोझ-ता परिवर्तन तो बकनामाने अपने सावधान किया किन्तु उनका मनसे यह भय नहीं निकला कि मुझको भाषाको अहिंसक रूप देनेसे कहीं पूरा आश्रीतन न बँक काम । किन्तु गांधीपुर कांग्रेसके बोड़े ही दिना बाद वाला घाट जिसमें काम करनेवाले एक बाहरी प्रान्तके सज्जनने जब आप गांधी-के लिए बहूँ जिला मजिस्ट्रेटके नामन लमा मीम ली सब गान्धीजीन काय-कर्त्ताओंसे बर्षामें शपथ करा "बहु आरमी हमारे कामने ला नमा । अब हमारे लूँ समझी तरल नहीं देखना चाहिए और इन बातका अयाल रज्जा चाहिए कि स्वराज्यके काममें संकट लो आर्थिक । इसमें ला लो ही लोक पड़ें लो संकट सहर मवते हैं जो नहीं सहर लनसे चलका हम आश्रीतनमें कुछ काम नहीं ।"

१९२० में जबमेरके बेधमकत भी अनुमोदित होती बालाघाट जेलसे छूटे । यदि मैं मूल्य नहीं हूँ तो इसीरके कल्याणमल हार्ड स्कूलके नामसे केकर १९१३ तक वे छठके प्रबन्धनाध्यापक थे । इस तरह कल्याणमल हार्ड स्कूलको यह औरत प्राप्त है कि ब्रिटिशोंके उन दिनों जब बेधमकत सेठोबी जैसे व्यक्ति का ब्रिटिश भारतमें भी स्वतन्त्र रहना कठिन था वे एकदेशीय रिपायमें लगे हार्ड स्कूलके प्रिन्सिपल होकर आये । फिर उनके कर्मचारी होनेके सम्बन्धपर उन्हें निरुत्तार कर दिया गया और समयसमय सात वर्ष बिना मुकदमा बनाये जयपुर और बेहोर ( यदातदा प्राप्त ) की जेलमें रखा गया । सेठोबी बीताके परम अपासक तथा जीवनके अन्त उदाहरण थे ।

एक बार उन्हें जेलमें ५२ दिन का उपवास करना पड़ा; व मोहन ठानी करते थे जब अपने इस बेवसी मूर्खके बचन कर केत । ५२ दिन बाद जब प्रमु-प्रतिम उनके सामने लाये गये और उन्होंने बचन कर किये तब आकर मोहन किया । जब सेठोबी बालाघाट जेलसे छूटे तो उनके जेल-जीवनकी एक प्रलोचनी २८ फरवरी १९२० के कर्मभोर में छपी । उस समय महारमाजी-द्वारा सम्पादित गुजराती 'नवजीवन' तथा अंगरेजी 'ग्राम इण्डिया' नये-नये ही प्रकाशित हुए थे और सेठोबीको इस मुलाक़ातमें अनुवाद गुजराती 'नवजीवन' में प्रकाशित हुआ था ।

एक बार मैं बापूक साथ बससे बम्बईकी यात्रा कर रहा था । तीसरे दरजेमें यात्रा हो रही थी । हम लोगोंकी कोविष यह रही कि रैलगा दिया बापूको खाली थिके अतः हमसे बहुत पहले स्टेशनपर पहुँचकर निश्चित प्रकारसे बसे खाली करनेका प्रयत्न करते और महारमाजीका नाम

मुग़लर उस दिग्गजके मुसाफ़िर दूसरे दिग्गजमें बैठनेका चले जाते । मुझे याद आता है कि उस समय मन्सिनास भाई ( गान्धीजीक पुत्र नहीं ) हम लोपके साथ थे किन्तु यहाँ ही बापू रेलके दिग्गजमें आये दिग्गजमें मुसाफ़िरोंको न देखकर वे एक कम छयास ही गये और बोले यहाँ कि मुसाफ़िर क्या हुए ? अब मैं मन्सिनास भाईकी तरफ़ देखूँ और मन्सिनास भाई मेरी तरफ़ । अन्तमें बहुत डरते-डरते हम जोपान स्वीकार किया कि मुसाफ़िर हमारी प्रार्थनापर दूसरे दिग्गजमें बैठने चले गये । बापू बोले 'यहाँ नहीं चले जायेंगे । पुलिस डराती है । डीम डराती है । सरकारी अधिकारी डराता है अंगरेज डराता है अब क्या गान्धीजीके डरते रेलके मुसाफ़िर दूर भगाये जायेंगे ? और मन्सिनास भाईकी ओर मुन्नागिब हाँकर उम्होत कहा 'तब तो हनु आपका कार्मनो आचार न बगादना माँगो छौ' बापून पुनरावृत्तिमें बहुत सम्झा कहा था किन्तु मेरी डायरीम मैने पुरे शर्शोंको उस समय नहीं लिखा था । अन्तमें बापू बीरेसे उठकर रेलके दूसरे मुसाफ़िरोंसे भरे बड़े क्लासके दिग्गजमें बैठ गये और अपने कान-छमकी बात करने लगे । वहाँ हम लोगान देखा कि बापू अपनी बात रेलके मुसाफ़िरोंसे इन्जीनरकीमततास कर रहे हैं । मानो रेलके दिग्गजमें कई दिनों पहले आकर बैठे हों । मन्सिनास भाईने मुझसे कहा हम तो केवल बापूके स्वास्म्यकी चिन्ता है, किन्तु बापू भारतवर्षके जीवनसे घुल-मिल जाना चाहते हैं ।

एक बारकी बात है कि बापू भीपाल गये । वे बचपि भीपाल आ रहे थे । भीपालमें 'धर्मवीर' अन्त था और मेरा प्रबन्ध निपल था । इस बार भाई कमलाकासजी बजाजने मुझ भुवना दी थी और मैं छंदास उनके साथ था गया । बापूकी इस भीपाल-यात्राकी व्यवस्था प्रसिद्ध देगमफा हरदीन डॉक्टर अम्तापी साहबन की थी । डॉक्टर अम्तापी साहब भीपालमें उस समय हाज़िर भी थे । बापू भीपालके नवाब साहबके राज-मन्त्रिण नामक भवनमें ठहराये गये थे । यहाँ ही लग्ग्याका समय हुआ जब प्रार्थना करने बैठ गये उसमें भीपालके नवाब साहब डॉक्टर अम्तापी

महीबब और मोपानके रियासतके बड़े-बड़े जमीर-उमराव बुटने टेके बहाँकी प्रार्थना सुन रहे थे । बापू ध्यानस्थ प्रार्थनामें डीन थे । बीताये क़ुरान खरीक़से बाइबिलसे और सन्तोंकी ज़ानियोंसे प्रार्थनाके साथ मूँच रहे थे । उस दिन उस प्रार्थना-सभामें ग़ाज़िक़ या मौक़र राबा या प्रजा परीब या जमीर छोटा या बड़ा सब ज़ेद जाने क़हाँ बिछीन हो गये थे । उस समय साम्प्रदायिक ज़ेद मानो कोई चीज़ ही नहीं होख पड़ता था ।

जिन दिनों बापू १९३३ में इरिबन बीरेपर निकले तब स्वर्गीय पण्डित रविचंद्ररवौ दुक़ल उनके बीरेमें उनके साथ हो गये । क्योंकि बीरा महा कौचकसे चुक़ हो हुआ था मैं बैतूकके मिर्चोंको लेकर छिन्बबाड़ा पहुँच गया । उसी दिन बापू सिबना का चुके थे और छिन्बबाड़ा आनेवाले थे । बैतूकके पी माई बीपचन्दकी पोठीकी बुचनाके अनुसार मुझे क्या कि बापूको छिन्बबाड़ा सीम आना चाहिए और दिन-ही-दिनमें ज़र्या दिम रहते ही सतपुडाके सर्पाकार मोड़ों और ज़ानियोंसे कमसे-कम मुस्ताई तक निकल आना चाहिए । उस समय मैं छिन्बबाड़ामे देवामस्त भी सान-देकरबीके घर ठहरा हुआ था । मैंने तुरन्त एक तार ठिबनी दिया 'काइरकी मींस सतपुडाक टनिहज एण्ड वाट्स बिफ़ोर सन् सेट' और बी पछे वाच हम कोमेंलि देखा कि दुक़ल बापूबी और उनके साथकी मोटरें छिन्बबाड़ामें थी । छिन्बबाड़ाका काम सीमवासे निपटाया गया और बापू की मोटर आये मुस्ताईकी आर बाक़ पड़ी । कभी-कभी तो उनकी मोटरकी रज़ार अस्मी भीक़ ड़ी पल्ला भी हो जाती थी कि जिसस न हम उनकी मोटरक आगे ज़बित डंगसे रह सकते थे और न उस मोटरका पीछर हो ज़बित डंगसे कर सकते थे । मुझ 'पल्पीटेयन है अत मैं ज़बमीत हाकर जान कैसे याबा कर रहा था और पूण्य बापूकी मोटरमें नहीं बैठ था । बापूकी मोटरमें भी बीपचन्दकी पोठी बैठ दिवें गय थे कि न रास्ता बरात चलें । किन्तु मोटरभी बीक़ तुफ़क़ हो जाती थी जब मैं देखता था कि उन दीक़-घामोंक़े निवासियोंके मुण्डके-मुण्ड मोत गाँठ हुए बापूकी रोक़ केते थे ।



और समयका कठोरतासे 'पाकन' करते हुए भी बके हुए बापू उस्ताह  
 पूरक ग्रामीणोंको हरिजनके छठारका समेश मुनात जात थे। छिन्दवाड़ासे  
 मुस्ताई जाते हुए तो जबहू ग्रामीणोंने बापूकी मोटर रोकी थी। ग्रामीण  
 सौय प्रायः उन्हीं घोटोंको गाते थे जिन बीताको वे उस समय गाया करते  
 थे जब उनका कोई पारिवारिक लोच-बानासे लीटता था। किन्तु एक  
 ग्रामके ग्रामीणोंको येन बहू गीत गाते मुना जब बपवान् रामचन्द्रजी बोरेह  
 बर्षका बनबाम काटकर अयोध्यामें लीटे थे।

बापू जब मुस्ताई पहुँचे तब सग्या हो चुकी थी। वहाँ जो हरिजन-  
 प्रेमी सजा हो रही थी उनका नियन्त्रण वैद्यमण धीमुन् बिहारीलालजी  
 पटेलकी बमपत्नी जर्जान् मेरे मित्र मुन्दरपाल बापूकी पुरी कर रही थी।  
 बापू उनकी व्यवस्था अनुसार बहुत प्रसन्न हुए थे।

वैद्यमण रात बिजानके परवान् बापूकी यह इच्छा हुई कि वे मद्रानके  
 बिनौमोफिकल कॉलेजके प्रिन्सिपल और बापूके परम प्रिय मिस्टर डंकन  
 को उन दिनों एक वर्षके लिए सतपुड़ाके जेलमें जाकर रहे थे  
 को देखें। बापू पहले मुखेश्वर माइबके पाँच छोटीमें अपनी प्रसिद्ध अंदरेड  
 सिम्बा मिम मेरी बारसे मिले जिन्होंने भारतीय ग्रामोंकी सेवाके लिए  
 बापूकी आत्माक अनुसार अपना जीवन समया दिया और तब बहसि हम नाम  
 गान्धीजीक साथ उस स्थानपर गये जहाँ 'डंकन' बसाधय रहते थे।

हम तीन एक लम्बा-या घुमाव लेकर ताप्ती नदीके उस प्रसन्न मीन  
 पर पहुँच जहाँ उनकी यात्रमें लोच्य बहुत निरिचल्य भावसे लेटा हुआ था  
 बापूने जब वह स्थान देखा तो उनके मुँहसे निकल पड़ा 'स्वर्द्धरल्लह  
 हमसे सुन्दर क्या हो सकता है' और पर्वके नवावदाताओंकी कृष्ण  
 पर्वी। उस गाँवका नाम 'बारहलिन' था जहाँ भी डंकन रहते थे।  
 ताप्ती नदीके बराबरलमें बारह दिवसनिधर थे जिनके कारण उस गाँव  
 नाम बारहलिन पड़ा था। बापूकी गुरतीपर बीदाकर ऊपर बड़ाया गया  
 एक लम्बी चाटी बड़नेके बाद वनके दिग्दर्शन बापूनिधमें पहुँचे।

ब्रूमर देखनेसे राष्ट्रकर्मिके भन्दिर और ताप्लीका बन्द-बरातल दोनों स्पष्ट  
 दिखायी दे रहे थे और सीम्वय तो मानो सन् १९३३ के नवम्बरके उस  
 सप्ताहमें सतपुडाकी घाटियों और झाड़ियोंपर टूटकर बिखर रहा था ।  
 बापूका जो भी शोंका जाता काफ़ी ठण्ठा होता किन्तु सीम्वयमम वृष्टिचक्रके  
 पक्ष द्विचक्र-द्विचक्र मानो बन्दनवार बना चले थे । पहाड़क सिखरपर बड़ने  
 के बाद हम बिम्बामें पड़े कि यहाँ पानी कहाँसे आता होगा ? किन्तु उस  
 पर्वत सिखरपर तो एक कुआ और उसमें काफ़ी पानी और मासगुबार  
 साहबका एक बगीचा जिसमें केले तथा कई प्रकारके फल बने हुए थे । बापूने  
 पूछा 'बंजन कहाँ है ?' उस वन्द बसाया गया कि इस सतपुडा सिखरके  
 पश्चात् यह जो दूसरा ऊँचा सिखर दिखायी देता है वहाँ इतनी ही और  
 इससे भी कठिन बढ़ाई है । उस सिखरके ऊपर अत्यन्त बड़े-बड़े बंजन महा-  
 चय रहते हैं । बापू बिकबिकाकर हँस पड़े और बोले क्या वहाँ बंजरी  
 जानवर नहीं आते ? उस समय बरि में भूकम्प नहीं हुआ तो भी बिहारोला-  
 की पटेकने कहा था कभी-कभी आते हैं बरिवालोंका और जंगली  
 जानवरोंका तो मित्तका परिचय है किन्तु वे छेड़ते नहीं हैं । इन तरहकी  
 मिन्न-मिन्न चर्चा होती हुई, हम लोग बापूके साथ सतपुडाके सिखरपर चढ़े  
 जा रहे थे । और ताप्ली नबोकी छोटी-छोटी जहरे मानो नीचसे बहुत गबित  
 देस रही थीं । हम लोग मिस्टर बंजनके यहाँ पहुँचे उसके पहले म्हात्माजी  
 पर्वत गये थे । हम लोगोंको ऊपर चढ़नेमें जरा देर हो गयी थी । म्हात्माजी  
 मिस्टर बंजनसे बात करनमें इतना तल्लीन थे कि किसीका उस समय बात  
 भीतमें हिस्सा लेना बहुत कठिन था । जीटते समय जब ताप्लाते हम लोगोंने  
 बिहा ली कहा कि ऐमा सुन्दर स्थान जीवनमें फिर देखनको घायर नहीं  
 मिलेगा और यह मरबाय तो अभूतपूर्व होया कि भारतवर्षकी इच्छाकी  
 बलमान् बेल ताप्लीके किनारे राष्ट्रकर्मिकम कइसहृदये और जलमें म्हात्मा  
 गान्धीके बाबमनका पुष्प फल उठे ।

बैतूनसे बापू हटारसी जाने । बैतूनसे जीटनेपर होपमाबार रिडेके बाबई

नामक स्थानके मित्रोंने बापूसे आपह किया कि मैं अपने हरिजन दोरेमें बाबाईको भी रखें। किन्तु पुण्य ठमकर बाबाईने मैंने डॉक्टर बम्बरोकरने और स्वर्गीय पण्डित रविचन्द्रजी शुक्लन बाबाईबाबाईको सर्वथा निराश कर दिया और कह दिया कि बापू बाबाई नहीं चाहेंगे। इसारसी पहुँचकर बापू, मिथीलासजी दीपचन्दजी मोठीकी समशास्त्रमें ठहरे। वहाँ प्रातः उठकर बापूने मुझसे पूछा “माखनकासजी बाबाई यहसे कितनी दूर है?”

मैं चौंख और दस चौबीस मील।

प्रश्न “वहाँकी बाबायी कितनी बड़ी है?”

उत्तर “वहाँकी बाबायी छपचप तीन हजारसे कम ही होगी।

दनिवार और मंगलवारको वहाँ बाजार खलते हैं।

प्रश्न “तुम मेरे बाबाई जानका विरोध क्यों करते हो?”

उत्तर “यहसे होर्नमाबाद पहुँचनेके परचाय वहाँसे कुछ मील जाकर त्वा नदी पड़ती है। उसका पुल नहीं बना है। नदीको पार करना होता है। कभी बुटने भर और कभी कमर-भर पानी वहाँ खड़ा है। वहाँ पुल हर साल बनता है किन्तु अभी बनकर ठहरा नहीं हुआ है। बापूने आज्ञा दी कि आप बाहर और बैचकर जाइए कि पुल बना या नहीं। मैं एक मोटर कैकर त्वा नदी गया। पुल बन रहा था। उत्तरर चलकर देखा बड़ बना नहीं था। मैं लौट आया और बापूसे कह दिया कि त्वाका पुल अभी बना नहीं है। आप बाबाई नहीं जा सकते। होर्नमाबाद डिपेंडा यह बाबाई पाँच सेरी अम्बभूमि है, इसीलिए वहाँसे आये हुए मित्राको इस बातका दुःख हुआ कि बापूकी बाबाई के जानेके बजाय मैंने त्वाका पुल न बननेकी रिपोर्ट दी। बापू इसारसीसे बीना होते हुए सामर चले गये वहाँसे जयपुर। मैं जयपुर लौट आया। तीन-चार दिन बाद मुझे पार मिला कि बापू मुद्दामपुर होकर बाबाई जा रहे हैं और मैं मुरगा जाऊँ मुद्दामपुरमें मिले। मैंने मुरगा रेल पकड़ी और माइरवाड़ा पहुँच गया। माइरवाड़ामें मेक ट्रेनसे मैं बापूके साथ लौटकर मुद्दामपुर

जा गया। मैं इस बातसे अत्यन्त दुःखी था कि बाबई के जाकर बापूके साथ बर्बाद किया जा रहा है। उसके तीन कारण थे

१ बाबईसि हरिजन-कार्यमें कोई बड़ी सहायताकी आशा नहीं थी।

२ बाबई-जीसे सब स्थानोंमें बापूको बेम-भरम नहीं ले जाया जा सकता था। बाबई-जीसे छोटे स्थानोंको छोड़कर ही बापूका दौरा साधा जा सकता था।

३ बाबईसि हरिजनोकी ऐसी कोई सम्पूण बेदका ध्यान खोजनवाली तकली हुई समझा नहीं थी कि वहाँ बापूका जाना अनिवार्य हो।

साम ही बापू नियमसे गौ-बस बजेके लगभग सो जाउं थे। वह क्रम इस यात्रामें बिलम्बित नहीं हो सकना था। सुहायपुरपर उतरकर टहरन के स्थानपर थोड़ा रुकनेके बाद बापूने सुहायपुरकी सार्वजनिक सभामें भाषण दिया और रातकी बाबईके लिए रवाना हुए। उस समय मोटरमें मैं बापूके पास ही बैठा था। मैंने अचानकसे देखा कि महात्मा राम्भी मोटर रवाना होते ही हच-धर सिकोड़कर मोटरमें छे गये और दाहि निशानका स्वर भी सुनायी पड़ने लगा। मैं मन-हो-मन सोचता जाता था कि बाबई के जाकर जोय बापूकी निरर्थक बह दे रहे हैं। जब बाबईके स्कूटरके पास मोटर बस्तीमें प्रवेश करनेके लिए जाये तो उन जन छात्रोंसि विनिटोंमें ही बापू ऐसे जान मये मानो वे सोये ही नहीं और जब वहाँकी सभामें बापूजीन भाषण दिया तो मैं मानो पड़-सा गया। वह भाषण समाचारपत्रामें इस तरह जाका था

‘माइयो और बहनों

मैं तारीख ३ को जब इन्दौरमें जाया तो लोगोंने मुझसे नदीके बारे में कहा कि रास्ता लराब है। खराब रास्ता गुनकर मरा पथिर कमजोर होनेसे बाबई जानेका प्रोग्राम बरस दिया। बरस तो दिया मगर मेरा मन यही क्या हुआ था। मुझे इरादा बरकनेकी बिल्बीरी थी। भाई माधन-बासकी अम्ममूनि होते हुए भी उन्होंने मेरे शरीरकी हालत जानकर ही मुझे रोका किन्तु उनकी अम्ममूनि और आप लोगोंके स्थानको देखनेकी

मरा मम तो बाबईमें लबा था। मुझे डॉक्टरोंने मना किया दोस्तोंने भी समझाया, परन्तु उनका कहना न मानते हुए मैं वहीं जाया। यह बात तो ध्यान जान से कि मैं यहीं पैसा लेने नहीं जाया। मैं तो जान चाहती कि प्रेम के कारण जाया हूँ। पैसा तो मैं देण मरने-से बाड़ा-बाड़ा इकट्ठा कर लेंगा। भाई प्यारेकात मुझ आसह किया कि मुझे बाबई जाना चाहिए। हरिजनोका काम करनाका मैं जान ले कि कछोमें भी हमें तो धर्मि कहिण और नम्रताका हो पालन करना है। आपने अपने मानपत्रमें मन्दिर न मुमनपर कुछ प्रकट किया है परन्तु मुझे यह नहीं है। मन्दिर तो समय जानपर लुप्त जाचेंगे किन्तु जमी तो हमें लोगोंमें-से छुआछूतको मिटाता है। मैं तो मानता हूँ कि यदि हिन्दुओंमें-से छुआछूतका कर्मक दूर न होया तो हमारा नाश हो जायेगा। अगर हरिजन मन्दिरमें नहीं जाते तो याद रखो कि इस मन्दिरमें सबबान्वा नाम नहीं है—।

एतमें साह जी बने सन्दार बुचविहकी मोटरमें महारमाजी मुद्रामपुर लौट जाये। जब हम बस वहीं पहुँचे तो बम्बून सरदार बचविहको बम्बुबाद देते हुए कहा कि मुझे बाबई बने एतको लौटनेका जम्मेदा बताना पया था। किन्तु आपने तो मुझ बस बने एतका ही लौटा दिया।

जिन दिनों महारमा बाम्बीन नमक सत्याग्रह छड़ा था उस समय मैं तादीए २२ मार्च सन् १९३१ को महीन वृत्ति पया और डाक्टर बम्बु साहक साथ बहोका बाम्बीन सेवाग्राम देया। महारमाजीकी डाँडी-मात्राके बारह मिताही बड़ी मुधुया ले रहे थे। मेरे साथ उस समय बचविह स्वर्गीय बाबा साहब नीलकण्ठराव वैरागुण और जबलपुरके भी बड़ीनाबजी थे। बाबा साहब बम्बुसर गाँवमें महारमाजीसे मिलकर लौट जाये थे। मैं नहीं चले लमनी गाँव चला गया—'बुआ नामक बामन महारमाजी और नमक सत्याग्रहियोंकी टोली साथ आ रही थी। लमनी आकर मैं देगा कि मुजरातके गाँवमें नमक सत्याग्रही बापूक स्वागतके लिए लमनी गाँवका आ रहे हैं। लमनी गाँवकी आबादी उस समय भी-सी पसठ थी। वह बहुत छोटा-सा गाँव है।

क्रिपु बास-पासके पानोंसे मजराती किसानोंके मुण्डके-मुण्ड बापूके बघनके लिए एकत्रित हो रहे थे। विशेषता यह कि उनमें-से धामब पंचानने प्रतिष्ठितके सम्मय तो पैदा ही भीछाका प्रवास करके भाये थे। गुजराती किसानका बघन देने नहीं उसी समय क्रिया। उनको पीठपर एक छोलम होठा जिसमें एक लोटा एक बोटी और खानके लिए थोठिया नामक गुजरातका बना पराए होता। धामको साढे पाँच बजे ई गुजराती किसानोंसे बात करछा हुआ हुआ पाँचसे सवेरी जानेके लिए एस्तेम पढ़नेवाले केरबाड़ा और सूदी पाँचोंकी ओर चला। पाँचम लोपाने पानी सींच रखा था। बिछायते बिछा रही थी हाथ-कछे सूतकी माछाएँ लैवार थी। उस समय मुछे गुजरातके बाँवाम बापूके बघनार्थ एस्तेम बस-बस पाँच-पाँचकी टोकीमें गुजराती किसान पुस्य और रित्रवाँ साजबसते बीछे। अँधेरा होनेपर किरासन बीम्पोंकी छतार बनेक रेतने स्टसनोंका भ्रम पैदा कर छो थी। जिस टीसोको समसाइए कि बापू जाते ही होंगे मठ जाओ उनके उत्तरोंके बाक्योको मुनिए 'हमाय बापू बुबछा-पतला है, कहीं नह बीमार नही हो गया हो। नही उसे कंकड़-सरबरीमें मोट नहीं आ गयी हो। कहीं काँट लबनेसे नह एस्तेम ही बैठ न पय हों। धामद इत पापी सरकारने उन्हें बुबासे बसते समय ही निरप्रजार कर दिया हो।

उस समय नहीं हो ही रख बिछमाण ने। भयका घाव उस और हमनकी बेचैनीका कसम उस कि इतने ही में दूरपर एक लालटेन बिछायी पड़ी और गुजराती किसान गर-नारी खोरसे बिल्का छठे। 'बापू जाने छे बबानी केजयी। लोग इतने बेचैन कि बुरकी लालटेनको देखनेके लिए पासकी साड़ीपर चढ़ गये तो भी अपनी-अपनी लालटेन लेकर भागो बापूके आगमनपर लालटेनोंके क्पमें बुलाओं प्रकाशके फल फले हों। ठहरनकी बात सङ्ग न करनेमें गरछेना भागो जानरछेना नग गयी थी और नेछाके राम-पुपको बोड़पान बैठ गयी थी। कर उग किसानोंकी बातें मुनिए,

‘माई तुने बापूको देखा है ?’

‘हाँ रे !’

‘फिर तुम लीयेंगे जम्बुसरसे इतनी पैसल यात्रा करनेके लिए बापूका रोका नहीं ?’

साथ चलते हुए बहुरे किसानने अपनी पाग सम्झाली और बोला बापूका कीन राक सकता है ? वह तो लमेंदाकी पार है !

एक किसान जो इन बातोंको सुन रहा था बोला बापू बसालपुर क्यों जाते हैं यही मेरे गाँवके पास तो बहुत नमक बनता है यहीं बनावें । मेरे पाँचक भाग तो बापूके जाते ही ‘मीठू’ नमक बनाने लगे ।

एक किसान उत्साहमें कह उठा ‘अरे आका वहि जइ सु माने हम जीने वह जायेंगे और बापूसे बहुरे कि तुम लकड़ीक नहीं मोनी तुम्हारी आकासे सारी गुजरात जेक जानेके लिए प्रस्तुत है कि एक बाबाज आमी “आम्हा आमी गया और बहुरेन आकाजलमायो बापू आब से बघावो केजयो ।’

एक बहिन लड़कपर चढ़कर बैठे हुए पुस्तकोंको फटकारकर बोली बाम्ब्याने बालान पु बैठवान का की ? घरज वह कि गुजर बाबोंकी बनु म्वरा अपने लान्तेनोंका जंगर सिमे दोबाली-सी समाली चल बड़ी । क्यों ही बापू और उनकी टोमी पास जायी गुजर किसानोंकी बातचीत बन्द ही गयी । माती दील और संयमक रूप बनकर वे नमक उत्पादकियोंक साथ चलन लगे । जाने-आगे गुजरातकी किसान महिलाएँ बापू और बसन्तमहाराज गुजनाम अपने पीछोंकरते हुए चल रही थीं । मरा मन मुझने पृष्ठ रहा था इन बिलकुल ताज गीतोंकी गाँवोंकी आवामें इनने दीप्य कोन बना गया ? फिर मनन ही उत्तर दिया ‘ये जयवान् बालको बढ़िया है जो किसी साहित्यिक या किसी रचना-बोझके लिए नहीं उभरती । तब साहित्य नहीं समय बाल रहा है ।’

मुझसे समझनेके लिए पवरी लड़क की बाई मोल जम्बो रिज्जु

बापू अपने सत्याग्रहियोंको लेकर बूढ़ावरी कच्ची सड़कसे जाय थे। वरखे बरमी जमोममें पड़ी बरारें और कांटे उस सड़कमें सब कुछ था। हाँ वह मामूम हुआ था कि मुबराती किसान गर-गारी दिन भर उस सड़कके कांटे चुनकर दूर फेंक दिया करते थे जिस सड़कसे बापू जाते थे। बापू लम्बे चलकर जाय थे। सिरमें छादीका एक स्वेत टुकड़ा बँधा था। कुटनों तक छादीकी एक बोली पहने हुए थे उनके एक हाथम लाठी थी दूसरा हाथ एक स्वर्णसिक्के काबेपर रखा हुआ था। बरग मुका था। दो-बोली छतारमें सारा सेना कह रही थी

रघुपति राघव रामा राम  
पतितपावन सीता राम।

मानो वह लम्बे सत्याग्रहके युद्धमें रण-बाहिनीका बोधवायम्न था। बापू समनी पाँवकी चमत्कालमें ठहराव लये थे। बिस्तरेको लपेटकर बनाये गये एक तन्त्रियेसे वे टिके थे और जाते ही उनकी तककी गतिविधि की जा रही थी। उस समय कुछ पत्रोंको बापू लुप्त पत्र रहे थे और कुछको उन्हें पढ़कर सुनाया जा रहा था। उनके पाँवमें कांटे नहीं थे वे किन्तु पाँवके पादके कपासके सेतके कुछ बँटल पड़ गये थे। उसी समय उनके हुए बापू विधाय करनेकी बजाय उसकी गतिविधि पूरी होये ही समा-स्वप्नमें जानके लिए जलत हो गये परन्तु इसके पहले वे इत नाचकी सावधानी के रहे थे कि बाहरके जो जोय समनी पाँवम जा पड़े हैं उनके जान-पीन और रहनेकी व्यवस्था समुचित है या नहीं। उस समामें जम्पाबी पुलिस-पटेलने इस्तीफे दिये थे। सम्बर्द्धक उन दिनोंका अंगरेज सम्पादित टाइम्स भाष दखिया उन दिनों मिल रहा था कि नेत्राओंकी बबरबस्तीसे पुष्पिच-पटेल इस्तीफा दे रहे हैं। महात्माजीने समनोको समाम मुबरातीमें कहा जिसका आशय था कि आपसे-से कोई माई बबरबस्ती पुलिस-पटेलीसे इस्तीफा न दे और जिनमें ऐसी बबरबस्तीसे इस्तीफा दिया है वे अपना इस्तीफा वापस ले लें। पुलिस पटलोंकी बजाय इस्तीफा वापस लेनेके लिए ही बापू बबरबस्ती समाम



उस समय पुलिसका हर हकलवार मयक अकसर बना दिया गया था जिससे वह सरपंचाधिकारियोंकी गिरफ्तार कर सके। वहीं छबर मिली कि बमालपुरके नास-नासकी जमीन छोड़कर वहाँका स्थान भट दिया जा रहा था जिससे गान्धीजी तथा सरपंचाही वहाँ नमक न बना सकें। छोड़ा जिक्रकी पुलिसने मोटर-कारियाँके ड्राइवरोंकी सूचित किया था कि गान्धीजीके पक्ष आमवासोंको नहीं ले आये। गान्धीजीसे मिलने जानेवाले माधियोंको रोकने के लिए बेपारमें कुजराती किसानोंका पकड़ा गया और जो लोग न रोक सके उन्हें कष्ट दिया गया। विभिन्न पुलिसके अकसरों ( Inspectors ) को यह हुक्म दिया गया कि कुछ खरूके कपड़े पहनकर लोगोंको गान्धीजीके प्रभावमें आनेसे रोकनेका प्रयत्न किया जाये। मैंने उस समय उस दिन गान्धीजी हरकरे और भी सोइनीसे बातें की और सब हास-वाक पूछा। फिर बापूजीका बुझावा आया वहाँ ये यह बतला रहे 'नमक उत्पादकमें प्रायोंमें किस तरह काम हो। लोग बिस्ती शक्तिसे इन कामका करें। आपसोम गरपीन श्री किन्तु जियामें बसता हूँ। लोग सोच-समझकर कामको हाथमें लें। कार्यकी बटिमाइसीसे लोगकी पहलें ही अवसर कर दिया जाये और सरपंचाधिकारोंकी कटपा बहानेका हमारी ओरसे बिल्कुल प्रयत्न न ही। हाँ अपने समस्त ही लोग इसमें शामिल हों और सब तरहके छठरे छठनेकी तैयार हों तो हमारी बात है।"

हारी बातोंसे मुझ लवा कि महात्माजी बंध-बाँध और मालव यस्मिके महान् शत्रुत्व-बाहक है। ब्रिटिश-विरोध उनके कार्यक्रमका अंग नहीं है। धर्मपीन और सौम्यगार उनका विश्वास है। धनुषे बसता लेनेकी कोई भावना उनके पास नहीं है। ब्रिटिश सरकार यहाँ स्थापित है इसलिए वह करनेकी बिरीबी मने ही माने किन्तु इन महागुरुपके कार्य करते समय जो भी सरकार सामने ईत्सी इत्सी तरह विरोध होता। मानो महात्माजी देश बर्ष और ब्रिटिश-विराव इन बातोंके बीचकी चाराके पूर्ण अवगत थे।

महात्मा गान्धी ऐसी ध्वनि थे जो लोकजीवनके फव्वारोंका बुझ बनायी

बीर छेदकर डोरा बनकर उनके कीटि-कीटि निज्जन्मका भोग साधती ।  
 फिटने भीमे से सोचती से किन्तु उस ध्वनिकी फिटने खोरकी जाबाब खोपों-  
 के दूरसे गुंझी सठ्ठी थी । महारमाजीके शीर्षों हाथ बलते से एक हाथ  
 माली अपने देशका माया लिखाया था दूसरा हाथ भागीजन भुजाओंको  
 बलसा था जिनमें उठनेका हम न होता था । ईसे बाधममें रहते से वह  
 मानो देशकी धांस खानेका कष्ट हो वह स्वान गरीबोंकी जाबाब राख  
 म्हासे टकरानेका डार था । बच्चोंमें मूर्खोंमें लोहड़ियोंमें धुत्तोंमें  
 पहाड़ोंमें मुच्छाबायें भीड़ने, एकान्तोंमें बिजबोंमें बराबरोंमें साहिरा भले  
 ही चुप रहे किन्तु देशाचार बोक रहा था बसो भाषे बड़ो । मानो  
 जीवन साम्राज्यवादी देशमें जीनेका जीवन बड़ाव बीर बालीके बीचका  
 सवार हो । खीरकी छाँसकी तरह बलते हो रहता है । ठहरना जीवन  
 नहीं है । देशबन्धियोंके बन्धे मानो बसीकी बाबीमें बसीके प्रार्थना-सर्वोंकी  
 मुँहानेके छिप बजते से । वह बाड़े जिस बाँकी जिस पत्नीमें बोले समस्त  
 मानवताके मोरबसे बीली बीर बोलीली बोली बोलता था । पोपके मुखका  
 मुक्त हास्य मानो तुलसीके मुखाब्जोंमें बहनेको भी बाहे, 'कहा कहूँ छवि  
 भाव की ? कहा सदन साम्राज्यवादी बातनासे बड़कर छविबोंकी कमबोरी  
 बसके बल-करनमें बूझ सठ्ठी थी । वह रज्जा करे बीर विप्ल न बरके  
 हल ईसे हो सक्ता है यह कैन मान ? भुजाएँ ? फिटने कहबोविबोंने बन्ने  
 अपने हृदयमें अनुभव नहीं किया । फिटने कहबोवी बन्ने भाव भी अपने  
 हृदयमें अनुभव नहीं करते ? बड़ि बालसे क्याका बलबान् होने समझी तो  
 उसकी एक मुसकराहट या एक छिड़कीमें उसका कहीं पता भी नहीं बलता ।  
 एक बोली बोळता था सठ्ठी बाबो स्वतन्त्र ही । अपने रायके भाषे हाथ  
 पतारकर वह कार्यक्षेत्रमें बड़ी माँवता रहा कारागृहमें चलने यही माँवा ।  
 बपभूमि में बही माँवा ।

हमें सोच हो कि उसे फिटने क्यों बार डाला ? जिस हिताकी बड़  
 उसने रज्जीठ बलाकनके लिए विस्वको धकझोटा था उस हिताने मानवी-

को नहीं मारा अपने-आपका बच कर लिया । आज बं कहीं है जिसके जप-  
 बेसीपर माण्डीके बंधका इलजाम है ? आज उसकी समाधिमें-से भी मुग्ध  
 आ रही है कि किध मुगलियत बाबुसे मारतीज राष्ट्र खांस क रहा है बिज  
 काय बिज बनाया है । मूर्तिहार पाथरपर इमशानकी कोमलठाका उतारनेमें  
 व्यस्त रहता है गर्तक घरीरक लम्बुछन और बल्लवर रसराजका धबधब  
 करता है । बाइके बुल्लेके पसे फूलों और कलियोंको पसे लकटे है ।  
 मूर्तिहा प्रजनन बना उपबलों बीर पर्वतोमें पथीसे ललसकर गुस्सा  
 कर्पकसे ऊपर उठ रहा है और फूल और फल बनकर पथीकी पारमें सर  
 रहा है । ऐसे समय हम मानो अपनेसे पुछते हैं यम ! तुम्हारा आराधनासे  
 कष्टाने पुत्थार्यकी उद्दण्ड झानेस और कलाक। कायर होनैस बचा लिया ।  
 जहाँ तुम्हारी आवाज है, वहाँ कान आज बाहे न पहुँच पाते हों किन्तु  
 मनक कान उसे सबैब सुनते रह सक्ते हैं । बँदुकियाँ बाहे तुम्हारे घरवाँ-  
 का न छू सके किन्तु जल्ले उनमें तुम झुक सक्ते हो झुक रहे हा ।  
 तुम्हें बन्दन तुम्हें अभिनन्दन ।

गान्धीजी कहा करते थे 'जवाहर कुछ भी कहे मेरे मरनेके बाद वह  
देरी बोधी बोझने लगेगा। किन्तु सत्य है यह कथन। जयता है गान्धी  
जीको दो मुबारक भारतवर्षपर सदा यमी है। जवाहरका और विनोबा  
दास। बापूके राजनीतिक शिक्षणकी अप्रमृष्ट विधेयता हम प्रत्येक प्राप्तम  
देख रहे हैं। समस्त देशम आज बड़ी जोन सफल राजनीतिज्ञ हैं जिन्होंने  
महाराष्ट्र गान्धीके नेतृत्वम शिक्षण पाया है। राष्ट्रपतिसे केकर सुधीका नायर  
तक सारे देशमें एक दृष्टि बीड़ाए और बसते हुए पाठ्यक्रमके साथ  
अनुभव कीजिए कि गान्धी जोषित हैं युनों-मुया जयर हैं और वह अपनी  
भू-धर्मिणासे मृत्युका उपद्रास कर रहा है। अब गान्धीजी से उनकी  
'बैतुली' का संकेत राष्ट्रका नियमन करता था आज उसकी प्रेरणाके बल-  
पर भारतवर्ष विरमके सामने ऊँचा मस्तक किसे हुए कहा है।

जमी बस दिन तक हम उसे लुकी जाँचों देखते थे और प्रहारके लिए,  
पुष्पहारके लिए, सत्कारके लिए, और समपथके लिए हमारे हाथ छत  
विमूढि तक पहुँच जाते थे। आज जाँच मूँद केनपर वह बलनीय नामक  
मानो हमारे पास कहा-सा विजयी देता है। अब इन मुयाबाके बल नहीं  
स्मृतियोंके बल उस तक पहुँचते हैं। अब साबरमती सेवाशाला या दिल्ली  
की जमी काँतोमी जानेके लिए जारी ही हुई टिकिट हमें गान्धीजीके पाठ  
नहीं पहुँचा पाती। अब गान्धीजीको पानके लिए हमें स्वयं अपनी मुयाम  
अपने ईशानमें अलग अलगकराने कोन करनी होती है।  
संकराचार नहीं था वह जयकी महीका स्वामी भी नहीं था किन्तु  
तोय बसकी बात बर्माजाकी तरह सुनते थे। वह शासक नहीं था किन्तु

## सुभाष मानव सुभाष महामानव

जब तुम घारघसे मये लौन कहते थे तुम बीमार हो घरसे बाहर नहीं निकल सकते और तुम थे कि घरसे क्या हैसिये भी बाहर जले मये। तब यह कि रहस्य सोचा खरबिनने रहस्य काय बनाकर लिखा खीन्म और रहस्य अवतरित हुआ तुम्हार कर्मों ।

तुम जब मुझसे लीटे लोपोनि सोचा तुम जगरीका और ईर्ष्यासे बिर बाबोने कन्दी होये तुमपर मुकबना जज्बा दण्ड बिना बाधना । हितोहितो हितकर देता और तुम इतल भाषने एक साथ थे । सर्वनाथमें मित्र टधुनो-को सुनिवापर जलम-जलन लिपिबोने मने होओ किन्तु भाष्य परिनाम दण और भाषा थे एक ही होने ।

किन्तु फिर तुम्हारा विमान जला जलने सिपाहिकोंसे बिना लिकर किनो जल्लात लोका लोमोने कहा कि वह विमान बिर बरा विमान दूट गया तुम गिर गये तुम जल्लात लोके वाली जलम लोके याबा-मयी हो मये । तुम्हारा मृत्युपर कुछने बीम काँटा चुन गया कुछने बीसे काँटा निकल गया किन्तु तुम्हारी बीनपर हैसबासिबोने विरवाच नहीं बिना है बीनत रहे और साथसे यह है कि किसी दिन किनो देशमें किनो देशमें तुम जकर निकोये । किन्तु तुम तो रहस्य हो न ? बीनमम मरचमे तुम्हारा स्वभाव बीसे बदलेना ? एक बात लख है भारतवा भाष्य बने भारतका भाष्य बिगये तुम जब जन निर्माणके शिस्तेदार नहीं हा सकते ।

तुम दुनियात हुते या न हुते विरधवतिके बरदेसे हट मये । बीसे बटोर निर्भय हा रहे हैं अशुभोका होने पायुको मुगकरत और निर्माण मूल्य जाने जलन् हैस रहा है ।

तुम लीयोंके मनपर हो जीवनपर छाये हो क्योंकि तुमने भारतीय जीवनको मुखके बीचो-बीच जीवित किया है। तुम भारतीय विश्वाद्योपर हरिया रहे हो क्योंकि स्वतन्त्रता मिशनके दिन व तुम्हारे प्रयत्नोंका मूल्य बुकाना चाहते थे किन्तु तुम न थे तुम पास न थे। 'रहस्य' पर भी क्या किसीका कब्जा होता है? तुम भारतीयोंकी कल्पनाजापर छाने हुए हो। जब छहपस हिल्लन अबुकरइयान साइनबाब सिम्बेके छोटे हुए भी यार्दे आकाश ? तुम्हें जोखती है बुकारकी बाजी मानी क्कीसे दफराकर छोट जाती है बाँलोंमें कोई बीजता है किन्तु बाँहें जोषकर उसे हृदयसे नहीं जमा पाती। 'महा संभोजकी नियति आज्ञा नहीं देती। वह तुम्हें धामने लाकर खड़ा नहीं कर देती है। पाठ करनेको भारतीय मन राखी नहीं होता। वह मानता है कि तुम जहाँ क्की हो हो अवश्य।

तुम 'रहस्य' हो गये। इस देखके साम्प्रत और योद्धा और बलि-बली प्राय रहस्य होते जाये हैं वे अयमानोंकी अनन्त सामर्थ्यसे अपनाते हैं और बरबानोके समय रहस्य हो जाते हैं।

तुम बलिपत्नी तुम रक्त-आग्निके होता तुम सेवानी तुम सिपह सारार ! क्या धीमर्ब का तुम्हारी आत्ममूर्तिमें। तस्माईकी तो मानो अनन्याही कुलसी छिद्रें आही मीहें हाव

को क्या भी तत्कार लेकर तबीयतपर आनवालोंकी अपवा तत्कारवालोंकी तबीयतपर बाध-बाध होनेवालोंकी।

तुम्हारे आस-पास नहीं तुम्हारे पास मेराव बहादुरी मानो अनदेखा-सा अनहामापन बनकर देखनेवालोंकी अपमर्मेके बाहु मरे कल्लास बाँट्यो रखती। और बंवाल वह तो मानो

नैनो से बंगले में तुम्हें सेनो से बुला लेंगे; पलकों की चिक काल पिया की पुतली पर मुला लेंगे

मा रहे कहती रखती है। अपनी अमृत अमर्षि भी अधिक कूटनेबाबा म बोझदा नहीं है न। बड़े बड़े मोलोंकी भी तुम्हारी वह मगमोहनी

भरण-मोचनी मस्ती ।

बंदागटे साइके तुम अपने-आप क्षमि-वशपर नहीं जाये । तुम्हें प्यो या था प्रबुद्ध नीचोंमें बेइश्वर्यवासने । प्यार करनेवाला और खीजने वाला मानो सब मिश्रण हो गये जब उम्होंने देखा कष्ट सामने जानेपर तुम अधिक कष्ट मीपते और त्याग करनपर तुम और अधिक त्यागके लिए बैचन हो उठते । तुम इन्को जोड़ते त्यागको गुणित करत । उद्भव मानो तुम्हारा स्वरूप ही नहीं स्वभाव भी था ।

तुम्हारी जीवन-यात्राएँ मर्रा विविध रहीं । तुम बने थे भाई सी एत का इम्तहान देने अपने ही भाइयोंकी गुलाम मानकर गुलाम बदाकर विदेशी हुकूमत करनेवालोंको 'बचसात' में धिक्क और पहुँच गये सी आर शान के क्षमिवादियोंमें खड़ा करने जो भाइवाकी गुलाम बनानेवालाका शिकार होना जाना और भाइयोंको जन-वेवता मानकर उनकी पूजा की जानी मानो रचनका टिटिट ठेकर, देम-सेवाके क्षमि-वशमें सब पहुँच गये । इसी तरह तुम प्रबुद्ध व बेइश्वर्यताके साथ किमी ब्रिटिश जेम्स मुठकाल बिनान के लिए और पहुँच गये मुठके बीबी-बीच ब्रिटेनके धनुओंको मित्र बना मुठकी सेनाके निगडसाकार और भारतीय स्वातन्त्र्यके प्रथम बाहमराव कहलाने । फिर मिराज्जाके जीतनेपर, जगम विराहियीके विश्व कैरु तुम बने थे किमी मुरसित स्वामधी और जहानि तुम बसकी शक्ति बनकर भारतीय राज्जके धनुओंकी मर्रा बसा सका । और बिपान टूटनेत तुम पहुँच गये जगमके लीकर्म खड़ा देवना तुमपर पुन-वर्षा करें । बरत यह कि जीवनके यात्रा-वशमें तुम्हें मगनीते से बड़ा प्रभुपीठा बिलना रहा ।

जीवन-वश भी तुम्हारा नवर्षमय रहा । देवधनु देवलोकावागी हुत, तब बंगालका मैतृत्व तुम्हें प्राप्त न था । देज-द्विज सनपुण्यामे बटोर मंचर हुवा । ऐसा मंचर किममें तुम्हें पछाड़ बिचो ।

कदिलेके अखिल भारतीय पक्षमें तुम्हारे लागने अवाशरकाम थे । क्षमि-वादियोंका हम बंगालका हम और भारी हलचलके बाह भी बाण्यानी

और मोटीकाजोके सम्मिलित बलके सामने तुम छोटे पड़ गये । तुम्हें पुन कसकता काँग्रेसमें (१९२८) ठोकर मिठी ।

अब तुम त्विद्वज्जलज्जकी रोव-सय्यापर पड़े स्वतंत्रताका स्वप्न-चित्र बना रहे थे तब तुमने अपने देशवासियोंको चेतावनी दी थी कि वे गान्धीके मतत्वसे दूर हट जायें किन्तु अब तुम झौटकर मारत आये तब देशभक्त मारीमें डॉक्टर करे और न जान कौन-कौन गान्धी-बिरोधी तुम्हें स्वयं नष्ट करन पड़े और गान्धीके आशीर्वाधोंसे भरी हरिपुरा काँग्रेसके समापित्वकी बाड़ी-बड़ राष्ट्रपतित्व तुमने स्वयं गान्धी और बल्लभभाई और गान्धीबादियोंके हाथों ग्रहण किया । इसमें भी कौन द्वारा तुम या गान्धी ?

कि डॉक्टर पट्टाभीसे जोहा भकर गान्धीको पीछे ठेककर तुमने त्रिपुरी काँग्रेसकी यही नीती । किशनी कटुना किशनी मत्सना किशन इल्लामाके बीच । एक-दो तीन पहरमें भी कौन इल्लाम तुमपर नहीं बना किन्तु तुम्हारी नीती हुई यद्योपर राज किसने किया ? नहीं भी तुम्हारे माधन कठोर संघर्ष था । तुम्हें हारना पड़ा । कसकतामें तुमने काँग्रेसकी गारो काह हो ।

बहु भी एक दिन था । तुमने सोचा तुमने ठाना तुमने धुक किया कि काँग्रेस-जैसी एक समानांतर बलसाक्षिनी संस्थाका निर्माण करोग और मेक किया भी फलमुम्भूतसे जो तुम्हारे बाहरी लीवके बहरसे बंगाजको भूखा मारने और दमायें भून डालन ही मफल हुए ।

किन्तु तुम तुम गान्धीक मान लेम्में बैठकर मासा अपनको तैयार न थे । तुम मुझको प्रशु-श्राप प्राप्त स्वयं-सन्धि समझने थे और भारतीय आजादीके लिए संघका उपयोग करनेके लिए इतन निश्चित थे कि 'प्राप्त जाये तो भी तुम उस अवसरको छोड़नेके लिए तैयार न थे । ऐसे निश्चय-के लोगोंके भाग्यम फूलोंकी खड्या कभी नहीं रही होती । उनके मतेमें पड़ फूलोंके हार, बिजयके सुपुष्पायमाण अस्तित्वकी सचिकताके सिवाय और क्या व्यक्त करते हैं ।

तुमने अपनी बुद्धताकी कभी भी अवसर-बादिताकी गन्हा बाहरसे नहीं



बाँका । बड़े तुम्हारी पूजाके पात्र थे तुम्हारा पञ्च-भंग करनेके हज़ार  
गही । तबप तुम्हारे सेनाके सिपाही थे भातापर कुरबान करनी हम  
सामग्री ! तुम्हारे प्यार दुकार, रोमांस और चुम्बनमें-से करबानीके बज़  
भूमकी सुगन्ध जाती थी और सिर उतारनेके रक्त-मिथु जगमें-से बू छटते थे ।

पुष्पिका कितना पहरा था । कककसेमें जस समय स्काटलैण्ड-नामके  
मिसाप्राप्त कितने पुष्पिष्ठ बिल्लाही तुम्हारे बायें-बायें तुमपर निगहबानी करते  
हुए । फिर तुम बीमार तुम्हें बाड़ी ऊम आयी । और एकाएक तुम कायर ।

हिटलरका तुम्हें मारणका प्रथम बाइसराय बनाना । महीनों कोई खबर  
न पाकर भारतीयोंको तुम्हारी मृत्युकी बुर्चका और एक दिन तुम्हारा  
सैनाब रेडियोपर भारतीयोसे बातना । और वह बाबाब हिन्दू सेना बड़  
बुढ़ा वह तैयारी । मानो मुसक महान् और घरेलू भीपते तुम्हारे हाथों  
तुमने अपन-आपकी हँसते-हँसते सौंप दिया ।

और एक ब्रिटिश-मुसको बन-मुस कहनेवाली देवदासकता देवदे कहने  
कनी वह आपातका एपेण्ट हो गया । वह देवदासकता जो छह आपातके  
महान् पड़ोसीके हाथों छोटियों और नारोंपर बिक चुकी थी किन्तु तुम थे  
कि जमानेकी ऊँचीपर लिये अपन तुमहले नामको अपने हाथों मसककर  
मिटा देनाक मुख्य ठकुर, अपनेकी ठकुरायेँ बँक चुके थे कि 'मारत तु  
भाबाब हा था ।

और आज ! आज तो सब तुम्हारा पुन माते है । तुम्हारे सिपाही  
भारतीय सेनाम के लिय बने है । तुम्हारा 'अब हिन्दू'का नाम भारतवर्ष  
और भारतीय सरकारका नाम ही गया है और स्वर्गीय धरतु बीमसे  
स्वर्गीय सरकार-भी गले मिले थे और उन्हें भारतीय मन्त्रिमण्डलमें बगड़  
भी मिली थी । किन्तु तुम ? भारतीय सरकार अपनेने अब-अब बल योत्रेयी  
तो तुम्हें पुकार छेटी ।

एक भारतवासी सिर्फ़ एक भारतवासीने अपनी सब सम्पत्ति तुम्हारे  
नाम कर दी थी । वे थे सरकार पण्डके ज्येष्ठ भ्राता थी विदुलमाई बटेक ।

इतनी शक्ति कौन अपनेमें संभय करेगा ? यदि भारतको आजाद रहना है तो सुभाषजी ताकत अपनेमें रखनेवाला सिपाही सिपहसालार सेनामी हो उसे आजाद रख सकता है ।

और यदि आज सुभाष किसी जोरसे आ जाये ? तो वह अपनी स्त्री और पुत्रीके साथ महान् बचकी बस्तु होवा किन्तु वह पूजा पाकवा प्रणय का चार्ज तो उसे किसी नबबखान ही को सौंपना होवा ।

ससत्री जनस्य असफलताएँ और मोह-मरी अगणित सफलताएँ भारत को सम्पूर्ण सफल बनाकर गौरवमयी हो गयी हैं । क्रियाशील स्वप्नदर्शी भक्त और साधक जब अपने सक्षमोंपर समर्पित हो संभर्षोंपर चढ़ता है तब उस व्यक्तिकी असफलताएँ समाज और समूहकी सफलता बनकर देशोंके रक्तमें झोटी जाती हैं ।

तुम करबन्धके न हुए,

तुम गान्धीके न हुए,

तुम सनमुक्तके न हुए,

तुम बग़ाहरके न हुए,

तुम अपने न हुए,

तुम हुए केवल मातृभूमिके भारतभूमिके ।

तुम्हारी असफलताओंपर कुंठन

तुम्हारी अवज्ञाओंपर असत

तुम्हारी सेवाओंपर पुष्प

तुम्हारी सेनाओंपर बीपबान

तुम्हारे निश्चयोंपर जय-जयकार,

तुम्हारे बलिदानोंपर—

आजाद भारतवर्षके—

अमित वध ।

## तेजस्विताके प्रतिनिधि विट्ठलभाई

बंगालके प्राच्य सैन्यमुत्थाके सेहायसामगर हुमने लिखा था समस्त भारत कठी हुई स्वाधीनता देवोको मनावेके लिए उसने बयानबाजी मृगार करनको बलिदानोंकी मांगा मूँब रहा है ।

२१ जुलाईने उस माकाये मीवुत थे एम सैन्यमुत्थाके प्राच्य मूँब दिने थे । २२ अक्टूबरने सिद्धचरलीगके बिनबा मनरये भागतीय राजनीति और तेजस्विताके प्रतिनिधि देवमात्र पत्रिकाकी भी उसी माकाये मूँब लिखा । स्वतन्त्रता ? आह स्वतन्त्रता ? वह हमनी लस्ती बीज नहीं वो दो-बार बलिदानाये प्रसन्न हा पामे । इतिहासके पृष्ठोंपर बलिदानके वो स्मृति-चिह्न बने हुए हैं उन्हें पढ़-पढ़कर मसार जानुओंके समुहमें दुःखता रहता है ।

धीमूत विट्ठलभाई पटेल भारतीय राजनीतिक कक्षानके वह पुन थे जिसके उस और सीरकहा मंमारपर रोव था । वह कुलाव थे जिसके चारों ओर काँटाकी काठ रजती है । उन्हें बन्धनम येनामेव प्रयत्न करनेवालेकी मूँबीका मूल सङ्ग करना ही बढ़ना था । अमेरिकाके मायाजालमें फिटने सोमोंका पत्रभट्ट किया और निष्क्रिय नहीं बनाया । उस बदपर वहसि बैच और बदरी लवके बन्धन तरकारी ओहरे अपनी बाहिमी पैसा रहे हों अपने-आपको अग्रगण्य रख लके ऐसी मजदूरी दिनम हो सकती है ? देव-प्रम ग्यानिमान और राष्ट्र-पर्याय अनम मुरविष्ठ थी और वह देव-प्रम स्वाधिमाल और धारम-विराजये मुरविष्ठ थे ।

उस मयाज-मुबारक और चम्पीर देव अकलके नाते वह बपति भारतकी अर्निम आहर पा चुके थे । परन्तु अलेम्बलीक कथ्यहाके बदपर तो वह ऐसे बमके आनी वह नीकरपाहीके लिए मूमैतु ही हों । जहाँ विरोधको पादम्बकी श्रव्यरी लज्जापना ही बहा टोन और बड़े दिलके व्यक्तिही ही

भावस्थगता है। वह असेम्बलीके अधिकार, शक्ति और मर्यादाके सरलक भाषा बनकर प्रसिद्ध हुए। उन्होंने मरी हुई-सो सुनी रक्तहीन कंधासो-पम असेम्बलीको भी चमका दिया था।

असेम्बलीके निष्पन्न अध्यास यदि आज तक कोई रह सके हैं तो उनमें सबसे पहला स्वान स्व पटेसका है। कौन-सा अध्यास सरकारी प्रभावसे बसूठा रहा। स्व पटेस ही एक ऐसे व्यक्ति हुए जिन्होंने अध्यासके पक्षको किसीक इयारोपर देख नही रखा। आत्मयजनक गूढ़ता और कूटनीतिके साथ एक बार वह हिंस्र एक्सीक्यूटिव कमाण्डर इन-चीफको फटकारते देखे गये। इतना साहज एक भारतीयमें? ऐसीको इम्बिशन पर्वोका कोई ठिकाना था? अंगरेजने इतने कितने साधन करना ही सोचा था। गुलाम भारतमें आकर बहुत दिनोंसे शासित होना भूल गया था। एक भारतीय-गारा कमाण्डर इन-चीफ-सिसे व्यक्तिको जो बायसरायके बराबर है, जधीक होना पड़े! बात वास्तवमें आत्मयजनक की पर वह न्याय और निष्पक्षताका अटल पुष्पारी विधानकी व्यक्तिवाले ठमर ही देखता जाया।

वह असेम्बलीके अध्यास रङ्गकर भी देखको भूक नहीं। कभी बारडोडी सत्पात्रह फरममें चम्पा बैठे देखे गये कभी राष्ट्रीय महासभामें उपस्थित होते हुए, कभी हर रायक हाइनेस रागी मेरीसे ह्रास भिक्तते हुए। जहाँ पहुँचकर सभी रंग बरक बैठे हैं वे जारे धोमकी तरह निकले। एक केन्द्रक-न लिखा था 'जस समय विदुष्यमाई स्वराजी न रङ्गकर भी देखस्य बन रहे। दक्षिणमें न पङ्ककर भी स्वराजी बने रहे।

बार-बार जेल-धीनने धन्य काली ही संसारसे बिदा केनकी वाध्य किया। वह भारतीय स्वतन्त्रताके लिए आठों पहर परीधान रहते। बीमार अवस्थामें भी चुप नहीं रहे। मुसुके मुँहमें जाते-जाते भी भारतके सम्बन्धमें प्रचार करनेमें लगे रहे।

ऐसेको जाकर हमन भारतीय स्वाजिमान बम्भीर प्रकृति फूट राज नीति निर्भीकता अपूर्व साहस समन दृढ़ता दूरवसिता और स्वतन्त्रता

की एक प्रतिमाको खो दिया है।

उनके अभावमें जो भाव राष्ट्रकी राजनीतिक जिम्मा वह सहसा भर नहीं सकता। वह अपने सभी भाव ही थे। भाववय-वैध व्यक्ति बार-बार नहीं बनसते। सरकारके समय और अपार शक्तिको प्रत्यक्ष समानवाले व्यक्ति कभी-कभी ही प्रधानमें दिखायी देते हैं। अमिनस्युके समान सबके अहम्यपूर्ण बुझकर समझ-मछाड़ करनेवाली बीरता विरहीको प्राप्त होती है।



गणेशशंकर राव भम्भा

[illegible]

‘मधुसूदन’ के अर्थ में ‘मधु’ का अर्थ है ‘मधुर’ और ‘सूदन’ का अर्थ है ‘सूखाना’। अतः ‘मधुसूदन’ का अर्थ है ‘मधुर करने वाला’। यह नाम भगवान् श्री कृष्ण के लिये रखा गया है।

बसकी चुनौती के सामने मतमस्तक होनेको बाध्य है।

गनेसजी पत्रकार थे। 'प्रताप' उनके बिचारों का बाहुक था। यही एक ऐसा पत्र था जो सन् १९१५ में एवं उनके आस-पास के राष्ट्रीय प्रकाश विरक्त वातावरण में अपनेको संपन्नपूर्ण कहिंसी कह सकता था। दरबारी प्रबोधन शासन की लीके रोप की कभी मुचीबर्तों और राजनीतिक मतभेदों का बहुरोका वातावरण कोई भी जनसंजीके सिमिछारी लेखको मजबूत कर सका। राष्ट्रीय धर्म में गनेसजी राष्ट्रीयता के सघर्षक थे परन्तु उनके जीवन में ऐसी बटनारें थीं जिनसे अब कि उन्होंने राष्ट्रीय परिपाटी का पालन आवश्यक नहीं समझा। वे राजनीति में निर्धारित पक्ष एवं धैर्य का निर्वाह मात्र करते उनके ध्यान का केवल नहीं वे प्रस्तुत एक ऐसे प्रतिभावाली व्यक्ति थे जो स्वयं अपनी अन्तःप्रेरणा से अनुप्राणित हुआ करता है।

'प्रताप' एक दिन उनकी शक्ति का हुनर दिन हिन्दी-जनता की सहायता और आज वह उनकी श्रम-स्मृति है। पत्रकार-कला के हिन्दी स्वल्प के 'प्रताप' नामक राष्ट्र-पत्र से गनेसजीने कार्यरतों की देश-वातकों को मजबूतों को कुतूहल को आकाशचरित्रों को और स्वाधिका को समानार चुनौतियाँ दीं और परिणाम में उत्साहियों अपमान अन्ध-शक्ति और करारवार सहे। अब वे जेबन भाते हैं उनके पर बिहोपर बलनेवाले उन्हें 'विमर्क' करते किन्तु वह इतना महत्वा होता कि उतना मईवा विलक सपानवाला मतक हुंदरके लिए दिग्गिदी राष्ट्रवादी बर्षों के मानो पक्ष किने हुनरी फिरती है। इस मानते हैं कि 'प्रताप' की बटोर शक्ति से व्याकुल होकर और अपनी प्रारम्भिकी परामर्श के आधार होकर एक प्रचार वेदी गनेसने पत्रकारों को अपने राज्य के प्रजाजन के नाते सहते हाथ बढ़ाकर विलने बलवाया और मंडम एक बरत के साथ जारी मर्यादा पैठ की। गनेसजीने बरदा रक्तकर उगाति लीटा दी और कहा "कबदा लेकर मर्यादे आपका आदर किया है। चाये लेने की 'प्रताप' आज नहीं देता।"

गणेशजीने यह कमी बर्बाद नहीं किया उनके प्रभाव एवं सामर्थ्यके भीतर रहते हुए कोई कार्यकर्ता या मित्र चाहे वह किसी भी क्षेत्रका क्यों न हो मुसीबत झंसे और वह बैठे रहें। अजुनकी तरह बर्हातक उनके 'बाधों' की पहुँच भी कार्यकर्ता अपने संकटोंमें गणेशजीको अपने पास पाते। वे उन व्यक्तियोंमें रहे जो अपने कार्यक्षेत्र मित्रोंमें हृदयकी तरह सन्निकट हो जाते थे जसः उनके संकटोंसे बहसवाली दुनिया सन्निकटता में झूठकर उनकी महत्ताका आकलन नहीं कर पाती थी। एक बार बाबासाहब गीरोजीके स्वयंवासपर लिखते हुए गणेशजीने कुछ इस आशयका लिखा था 'हम अब खन्धेरे-बाजारमें मोमबत्तियाँ बुझते हैं उससे पहले सूर्यके प्रकाशमें सूर्यको बुझ नहीं कर पाते। आज यह बात उनके मुखपर बर्सेति बटती बली आ रही है।

जो गणेशजीने अपना मिर देकर मानो यह संकेत दिया था कि स्वतन्त्र्यके देवताको आस-पाससे बगीनपर उतारनेके लिए हम सिर देनेकी यह जेठी छहक-सहकगुनी हरी-मरी रक्त सके। अब सिर देनेका यह संकेत हिन्दी-अंगतुकी तस्माईका मत रहे तो २५ मार्चको स्मृति कमी अपमानित न हो और क्रांतिकी क्यारियाँ कमी सूखी न बौख पड़ें। गणेशजीको बार करती समझ हम एक बार यह सोच किया करें कि हमारे सिर भी हैं और हममें रक्त भी है, और बुनका आनन्द न जाने कबसे हमपर उभार है।

यदि हम बकरतका रक्त-करने बसूक करकी मानवमुक्तन दुर्बल माननाको टुकरा सके तो हिन्दी-अंगतु नाते हमें ऐतिहासिक बरीहर और मेरनामय मुक्तनके नाते 'प्रताप' और उसकी शक्तियोंकी रक्षा किये जाना चाहिए। यही हमारी छन्धी गणेश-पूजा है।



## स्वागतं ते महाभाग विनोबा

जाने कब किसने जमानेकी स्मृतिमें 'तबे' छपित कलौ कुते —बाकी बड़ा बठ घामिख कर दी और तबसे आज तक बिना सोचे-समझे कोय इस भान्ति को बोहरावे नके आ रहे हैं । बिचारकी कसौटीपर जाहे जिन युगको कसिए व्यक्ति और केवल एक व्यक्ति मिलेया बित्तके महान् मुक्तचाकपन-के चारों ओर, व्यक्ति-समूह, सौरमण्डलके उपग्रहोंकी अति बक्कर कटना हुआ पाया जायेया । बहु-संस्तिसाधर, पूर्व और बरिचनके मौलिक मन्त्रमैरी की अनुकूलतासे मानवी हो या कैनिन या कमबेस्ट मैसा कोई और व्यक्तियों-की संक्ति-आरा उसमें अपना जीवन बिछीन कर देनेकी बिबल है ।

अपने जीवनमें समूहको अपेक्षा कुलको सरा अधिक महत्त्व देकर महारमा बान्नीमें एकद्वे अधिक बार उपपुस्त भान्तिपर प्रहार किया । और सभी उस दिन गान्धी-बिचार रसिमसोसि आसोबित आचार्य विनोबा जब बान्नीके अकाल अकालसे अपरिपुष कार्यकी पूर्तिका बहुस्य देकर दिन्ती पहुँचे तब उनके साक उनके बी-बार ऐन भी साथी थे जिन्हें याद रखनेमें इतिहास अकसर झूल कर दिया करता है । अत आज एक बार फिर यह प्रश्न सामन आता कि लमड़ेकी अपेक्षा व्यक्तिको बुद-पुस्वरो क्यों न संक्ति एवं सामर्थ्यका साग मना जाये ?

॥ बहु-संक्ति-सीत निमित्त जमानेका बाती होता है । अपना जमाना बहु-स्वयं निर्माण करता है । उसके आरोह-विन्दुओंको शू सवनेव सर्ववा अतमव नीक-नीक बलनेवासे लघु-समूहोंकी रीश और धीर से अपने अधिमत्तमे विमुक्त नहीं कर पाती । जमाना साधार होकर उसके पीछे बलनेको बाध्य होता है ।

बिरबकी एक प्रवाह कहा जाता है । प्रवाह ती निम्नपायी छूट ।



और महत्वमें यह सबसे आगे रहा। इसका यश भी इसी प्रान्तको मिला। पाण्डीकोठी नहरोंमें भारतीय जनता सामुहिक रूपमें सरयाप्रहारे बठोरतार अनुशासनोंको पार करानमें असमर्थ ठहरी। अतएव भारत सरकारका कुछ नीतिका विराज करनेके लिए उन्होंने व्यक्तिगत सरयाप्रहारे त्रिकल्प निश्चित किया। आचार्य विनोबा इन नहरके प्रलय होताके गौरवसे अनि पित्त हुए।

एक ओर राजनीतिक प्रसिद्धिके क्षेत्रमें प्रलय जानकी मची हुई स्पर्धाकी देखिए। रबाग और करवानिकोका किडोरा पीटते हुए, उसी पूजा-बरीरर पाँच रसकर जगने हो साबियोंमें घेष्ठ बीसनकी कोशिशोंका ताँता बँधा हुआ है। फिर इस व्यक्ति-विरोधकी समर्पण-भावनाकी भी देखिए जो सापक बोधनक धान जिन आकर्षणसे अधिभूत प्रसिद्धि और लोक-प्रतिष्ठा की भावजनकी तरह बार-बार टुकटाता आ रहा है।

बम्बई प्रान्तक जुलाबा बिलेके मायोबा पाँचकी भूमि पर्यायी है कि विनाबाका बचपन कमकी गोहम सेलते बीता। तब या विनोबाका पूरा नाम था—श्री विनायक नरहरि भाव। विद्याभ्यासकी लोक-परम्पराके अनुसार सन् १९०७ में बरीराके हाई स्कूलमें नाम लिखा गया। रिन्नु विद्याकी जीवनका कँटीला मुकुट पढ़नामके लिए राज्यकर अविध्य जिन विन्नु तिर्योंको बरच करता है। उन्हें पाठनकी बीबासत बँधी निर्वीच पाठ्यात्मार्थ पचा नहीं सकती। श्री विनायकने विना कोई डिग्री छिय सन् १९१९ में शुभाम शिवा प्रधालीको छाक दिया। घर और बारिकारिक भीषनकी बीबाएँ, परिचयक बारमोँर डके भीनिक उद्यामोंसे बैद्यकी समस्त बनानेक पधरायी विनाबा स्नेह विनामात्र रयटीके पयके मुगधय आकर्षण सापारज मानव की कमचानवाली महारवाणीगाएँ, इन सब उबीराकी ताड़ते आर्ममें ही श्री विनायकने मुग्रा अनुभव दिया। उन्हें उम विद्याकी तत्प्राय श्री विनके लिए कहा गया है—मा विद्या या विमुक्तये।

एकसे बहते विनायक फिर उनके दीप दोनों घाई श्री लोक-भावनाके

महत्तर बादलोंकी प्राप्तिके लिए घर छोड़कर चल पड़ ।

बोध्य मार्ग-दर्शककी खोजमें शीर्ष और मानसिक सर्वशक्ति बाह्य भी विनायक सन् १९१६ में कायी पहुँचे । महात्मा याग्वी सावरभती आश्रम स्थापित कर चुके थे । पत्र लिखकर आपने महात्माजीसे आश्रममें आनेकी अनुमति चाही किन्तु प्रतीला सहन नहीं हुई । बिना अनुमति प्राप्त किये मेहवान नहीं अतिथिके रूपमें सावरभती पहुँच गये । महात्माजीने अपने आश्रमके प्रारम्भमें ही मानो एक छोट-से सित विनायकका स्वागत किया । अपराजिता आयपरम्परा अपना नम्र-सा रूप चरकर मानो सिद्धियोंका प्रचार महात्माजीकी आश्रमाकी ओरमें सोंपने आयी ।

आश्रमवासी विनायक आश्रममें कर्मठ और कठोर अनुशासनोंकी उपनस पुनरनके लिए अपन मन और शरीरका सभी तरह के विनाशित तरह प्राचीन ऋषि-मुनिके परिचर्या-व्यक्त साधनामय जीवनको कहानी हम उपनिषदोंमें पढ़ा करते हैं । श्री विनायकका यह आश्रमवास कितना अद्वैतमय तपोनिष्ठ एवं अध्ययनधीन रहा—बहु इस प्रसंगमें व्यक्त होता है—दुर्बल अस्मत्त शरीर विनायककी कठोर समशील किन्तु चिकायतरहित चर्चा और परिचयसे प्रभावित महात्माजीने एक दिन पूछा इतने दुबले हो रहे हो फिर भी इतना बारा काम कैसे कर लेते हो ?

मिने-चुन रामोंमें अथाह महगाई लिये हुए घसर का काम करनेकी इच्छा-सक्ति ।

कैसे कहें कि हम शिष्यको अपने समस्त आनालोका प्रभावित कर देनेके सात्त्विक उदाहृत याग्वीजीका हृदय भर नहीं आया होया ।

इस तरह ज्योतिष ब्रह्मा प्रवर्धित हुई और चिनगारीसे दीपदान की परम्परा आगत की गयी । श्रीविनायक विनोबा भावे हम गये ।

सम्प्रदायमें आश्रमोंके मत पत्र और बातके एकनिष्ठ प्रचारमें अपना जीवन अपना देनेवाके स्वर्गीय वैद्यमत्त आनालाकजी बजावनी अनन्य सेवा

भाषनासे सन् १९२१में महात्माजी द्वारा वर्धा आश्रमकी स्थापना की गयी। विनोबाजी इसके प्रधान आचार्य बनाकर साबरमतीसे वर्धा आश्रम लाने गये।

महात्माजीके निवाससे बीरबान्धित संधीध (बन्धी) जिस तरह सेवा प्राप्त बन गया वसी तरह बन्धसि ५ मील दूरीपर अवस्थित पीनार नाम जिले इरिजुन सेनाकी मुखियाके लिए विनोबाजीने बुना विनोबाके चरण पड़ते ही परमनाम बन गया। याचो अपनेको जीते-जी बाढ़ देनेवाले आचार्य विनोबाज सन्त तुकारामकी बापको बोझाकर कहा

‘आपुले मरव्य  
पाहिल मी सोला’

अर्थात् अपनी मौत मन अपनी बाँछों देयी है।

राज्यपिता महात्मा बान्धी-दारा प्रकटित अभिनव व्योमि बनने जात करजम आलोचित किये आचार्य विनोबा महात्माजीके महाप्रस्थान के अनन्तर स्वतन्त्र भारतके हृदय-ग्रहेणका द्वेष और अनुपसे निर्मल बनाने का प्रयत्न कर रहे हैं। महात्मा बान्धीके अव्यक्त साचो स्वर्गीय महादेव ईसाईके शरीरमें श्रुपिटी बानो बोझायी जाये तो विनोबाका जीवन उन मन्त्रको जीवन प्रदान कर रहा है जिसमें कहा गया है,

चरमे मधु विन्दती चरन्सु सुदम्बरम्  
चरेवेति चरेवेति ॥’

सन्त तुलसीदासने भगवान् रामके भुंक्षे जगत्तु जल्लको परिभाषा में कहाया है

ता जगत्तु जाके अति मति न टरे हनुमत्त ।

मै सेवक सचराचर रूप स्थामि भगवन्त ॥

और इस दिन पुरुषार्थ छत्रनीमें विनोबाने चरणाविषोके बीच अपने बाण-मनका बरेल्ल कमजाया

‘आप सोपोंको देखे देखता हूँ जैसे भक्त भगवान् की देगता है।

विनोदके घट्टकोपम कमखोरी या साधारणका बाब करानेवाला कोई घट्ट नहीं। उनके बिचारोंका आज हम पंक्तियोंसे व्यक्त होता है 'बन्ध के साथ बन्धका बाताबरण रहता है मंगलके साथ मंगलका। वैसे ही मेरे साथ मेरा बाताबरण रहना चाहिए। लोग कहते हैं यह तो कस्मि-युग काया है, किन्तु कस्मियुगमें रहना है या सतयुगमें यह तो तु अपना युग के। सदा युग तरे पास है। इसलिए हम ऐसा न मानें कि दुनियाकी हवाके सामने हम साधार है। साधार तो अड़ होता है। हम लोग चेतन हैं आत्मस्वरूप हैं। हमारा बाताबरण हम बनायेंगे।

शरीर-धमकी आज भी बिनावा बहुत महत्त्व देत है। उस दिन दिस्ती के राजबादर प्राचना-मन्त्रमें उन्होंने कहा शरीर-धम छोड़नेसे ही दुनियामें साम्राज्यसाही और अन्य चाहियाँ पैदा हुई हैं।

राजपिता महारामा भान्सीके हम सुषोम्य प्रकाश-बाहक जीर कटरा बिकारी मत्त एवं लाल-मत्ताका हम पंक्तिमाके साथ देवाके व्यापक क्षेत्रमें हम स्वागत एवं अभिनन्दन करत हैं

“नमः परमश्रुपिभ्यो नमः परमश्रुपिभ्यः ।”

## प्रेमचन्द चले गये ।

द्विती-त्रयशुकी कहानीको भारतीय साहित्यकी कहानी बना देनेवाला कहानी-लेखक स्वयं कहानी हो गया । उसकी जीवन-कटनाम्बोका अब हम अंग्रेजीके पोर्चोवर दिनेश माबक अधिकारी रज गये हैं । उसकी जिस कथानपर दस-सठ मस्तक डाक सट्टा थे वह कथान दस-सठ कवलासिंहाइयानेकी बाज हो गयी । वह मानव-संस्कृतिका परिचय कितना था और हम उसका परिचय लिखने बैठ गये । अहाँ उसकी इत्तम सिलवाइ करती थी और उसकी एक-एक सोस और उसीसका अपनी आश्वेनि कसैजेवर जेल-मककर हुदयक भावना-कापम हम मोनका ताका सवाकर बन्व रन छोड़ते व मात्र हम यह सारा खजाना बाहर निकालनको तैयार है । अगर वह मादमी ही हमारे पास नहीं है जिसका वह खजाना है । उसक सारे साहित्य की सेकर हम लूटक मालगी गठरी बाँचे हुए डाकूकी तरह साहित्यक चोरहोकर लगे हैं और बस्तुका मानिक कापना है । हुन बाइत है उस बन्व कोई हम यह कहकर रास्तमे गुजर जाने के कि हुन निर्दोष है हम उस मासके हठहार है ।

धर्मशास्त्र हमें अपनी संस्कृति और मम्मताका जरक प्रदान बिना करना है । मझे कारण है कि धर्मशास्त्राणा बोझ लाह हुए भी समाज धर्मशास्त्राणा वर्मी-वमी छुना-ना मसि ही गजर आये परन्तु अधिकतर धर्मशास्त्राण पढाना-ना और दूर जाना-ना योग बनता है । यह सब है कि हमारे ज्ञानपर नीतिके कुछ नियमों ककाके कुछ संस्कारों धर्मके कुछ तत्त्वों इतिहासके कुछ अध्ययनों और विज्ञानकी कुछ खबरनोंको छाप पड़ी है । और ज्ञानक मात्र-दण्डार शास्त्रीयतामे जीवन और ज्ञानन शास्त्रीयता जरी नहीं की जा सकती । छायें जीवनके अन्दर प्रवेश नहीं कर पाती

बीबनके ऊपर हो ठोकर धारकर रह जाती है और ठण्डे लोह-रस्सपर तो ये ऊपर ठोकर नालेमें भी असहाय और असमर्थ होती है किन्तु जब बीबनके लोह-रस्सको बगलूके उत्थान और पतनकी कहानी अपन सीधे तापसे भरमा देती है। उस धारणीयता सरलतासे अपनी नियामकताके दृष्य क्या बाधा करती है। सुखी प्रेमचन्दके असाधन हिन्दी-जगलूके बीबन की तेज निर्माणकी बेबी छम्बो पड़ गयो।

बुद्धिमान कि हिन्दी साहित्यम कविता बचपल्लव बीबन स्वीतय उपदेश नीति सब कुछ बाधा और कहानी बाधा बहुत डेरके परधान। मानो साहित्यक विकास-बुद्धकी यह कमी की किसे यह पिण्ड कालियो तनी और पताके बाध हा आना बा। नीतिवताके लेखकके कम तमन स्तुल-मास्टर पाये इतिहास-लेखकोंके रूपमें मूल बीबनके सम्राज्य कविता-के रूपमें बेदनामों और बेबीनियाके हृदय धन किन्तु एक कहानी-कलक कपमें हम सम्पूर्ण मानव-रहस्यका उद्घाटनकर्ता पाते हैं। जैसे विद्याकाके सम्पूर्ण जनस कुमिल बनी-बाँमें जगाम और उगाये नहीं जा सकतें बीसे ही वे सम्पूर्ण बाते साहित्यके किसी बाधरेके डाय बपकत नहीं की जा सकतों जिन्ह कहानी और उपन्यास-लेखक स्पष्ट किया करना है। कम प्ने आधमीके पास धान्य बचहाता है रसहीनके पास कविता मृच्छिग हो जाती है और धारनतासे बोलित व्यक्तिके गान और बीबन और लोक-साहित्य बागो कहानियाँ बचहा कठनी है। किन्तु जो व्यक्ति साक-साहित्य की हिन्दी-जगलूके डेबो और गोबो सब जगहों तक समान पैसा मक्य बचनेबात मुरजकी किरनोंकी तरङ्ग बरननेबाते वालीकी तरङ्ग डेबो और गोबो बचिज और जगविज विज्ञान और कम-नही सब जगहोंपर एक-या साहित्य पहुँचा मक्य उस हिन्दी-जगलूम प्रेमचन्द कङ्कर स्वरय किया जाता है। किसी ग्राहमरी भाषाकी धाम-बाण्हेरीमें हिमो नाविक कम गड़े निक किमान पटवारी या भाकमुबारक पाय किता बाहरके पड़े-सिले मङ्कमें जम्पापडोंमें कचहरीके बाबुओंमें ऐलके बीकरोपे रीटरमें



प्रोफेसरोंमें इंजीनियरोंमें साहित्यिकोंमें कलाकारोंमें कवियोंमें वरिष्ठ किंती व्यक्तिता साहित्य एक-सा विद्यमान है तो वह है केवल प्रेमचन्द और उनके साहित्यिक साहित्य ।

पाठक जब समाचारपत्रोंको पढ़ते हैं तो वे पत्रोंपर कृपा करते हैं जब अन्य प्रकारके पत्रोंको पढ़ते हैं तो वे पत्रोंपर कृपा करते हैं किन्तु प्रेमचन्दको पढ़नेवाला साहित्यपर एहसान करनेके लिए साहित्य नहीं पढ़ता प्रेमचन्दका साहित्य ही एहसान बनकर उसके पास बाँटा है । यदि कहीबोंका संगठन बनिकता और निर्दुष्टताके खिलाफ उदर है तो कहानियाँ और उपन्यासोंके युक्तों कहीं सास्नीयताके खिलाफ उदर ही कहना चाहिए । जिन तरह प्रकाशने कृषियोंके विष्णुका समर्थन के साथ हीर-सागरका विहार छत्राकर, नामदेवकी कृटिया छाने और प्रकाशने के साथ मजदूरी करनेके लिए बाध्य किया और इस तरह उसके लिए बल-समाधि कैसे हुए विष्णुको अपने साथ लेकने-कुरनका बचकर देकर जीवन-दान दिया उसी तरह सास्नीयताके रूपमें बहुत चौड़ीरी और बन जाने और समाजके जीवनमें अधिकारिक हुए मानवाले हिन्दी साहित्यकी प्रेमचन्द और उनके साहित्यिकी युव-निर्माणाकारिणी केन्द्रोंमें नया बचपन प्रदान किया ।

ये कविता उपमान आ कहानियोंके साहित्यकी प्रमुख बसान करने के लिए नहीं कहना यह है कि प्रेमचन्दको छोड़कर हमने वह भी दिया था हिन्दी-अपुर्ण विचारोंकी भी धीकर नहीं छोड़ा । यह बेहता जब समय बीगमुनी है बाती है जब सोचते हैं कि हिन्दी साहित्यकी दिरोह-बन्धीय प्रेमचन्दको उदैरित पर जाना बड़ा । हिन्दी-जनमाने जिन व्यक्तिके साहित्यके अर्थिक समर्थक हानन बनना औरत समझा वही कविता हिन्दी-साहित्यक शत्रुता बादर और पूजाकी वस्तु नहीं बन पाया ।

धी प्रेमचन्दजीके मैं कई बार मिला और चर्चा की । सन् १९३३में भीड़न बनारसीराज्यके आर्थिक आदरसे बाधीमें उनके सरस्वती प्रेम

उपसे मिला । ५ अप्रैल सन् १९३५को सम्बन्धि बनारस लौटते हुए वे जगन्नाथ गहारे । इसके बाद १ अक्टूबर सन् १९३४ को कुछ ठस्य मित्रोंके साथ सम्बन्धि उनके बाहरवाले विवास-स्थानपर गेट हुई । बनारस-की बचपि मैने कहानी और उपन्यासोंके सम्बन्धमें प्रेमचन्दजीकी चारणा जाननेकी कोसिष की । सम्बन्धिसे कछापर उनके विचार जाने और उनकी रचनाके ग्रेक-इन्फुर्णोंकी बर्चा की । खगन्नाथे उम्मीकि साहित्यपर उनके बाब समरस होनेके यत्न किये और कुछ कछको-पीठी बर्चा हुई । उसक बाद वे प्रयागकी जकादेमोमें जनवरी सन् १९३६ क पूसरे सप्ताहमें और गायपुरके सम्मेलनमें अप्रैलके तीसरे सप्ताहमें गिरे । उस समय मैने देखा वे गन्ध बचपि अधिक सरस और बड़दूरसे अधिक परिचकी किसी बापके बिम्बईसे बैठेसे अधिक अपने स्वास्थ अपने स्वाध और अपनी कीठिके प्रति काररबाह और अपनी कठिनाइया अपनी रचना और सरकठाको ही अपने बीचनन उपहार समझकर मातृमूमिक मस्तिष्कानोके बीच बापा-के तम बापरेमें होनेवाके यत्न नेदोंकी मिटाकर सम्पूण भारतको संयुक्त साहित्य-सम्पद्य और सजस देखनेवाके बिम्बईमें-स एक न । सम्बन्धि की बर्चामें मैने पाया कि प्रेमचन्दजी उस कृषक समान हैं जिसमें अपने अमृत तुल्य मोठे फल देनेको बैङ्गलियाग सक्ति बीजूष हैं और जो अपने ऊपर उछमनेवाके कीचड़को ही अपना खाद्य मानकर बुझिके विवाठाके जीवनमें बैठकर जाने-अगवाने सुन्दरसे-सुन्दर पक्षोंका निर्माण किया करता है । बा मशालों-प्राग तोड़ी जानेवाली अपनी हाकियाको मौसमका कसम करना समझकर उस जगवानुका बरसान यागता है और जो बाम-याम अपनीठिके काँटे बिखने जानपर गजगता है कि चछा अछा हुआ इन काँटोंको लावकर मरे बाम बल बीड़ भाड़ कम हूमी । घामोच और नटीच तो उबाहने रीर भी काँटोंमें रहनेक आदी हैं वे तो मरे पास तक पूजा बहन करन आ ही पहुँचने । बा लाकोंकी उबादी हुई अपनीठिके यापार स्थितिके सम्भीर और एकाग्र जीवनना मुख्य कृता करती है वे कुशिम

जीवनक लोग युझे कम सत्कार्ये । इस भावनासे व अपनको आजीवनमें सुरक्षित मानते ।

इसका सम्बन्धमे मेरा उनका थोडा मतभेद रहा । उनका विचार था कि व्यक्तिका जीवन समाजका प्रतिनिधि है और समाजकी गति-विधि का संकेत करता है और मेरा ख्याल था कि जब जनताकयी समुझने मिल-कर कहनोंका प्यार बनाना छाड दिया है। तब समुझकी कटुतेका टूटकर अन्त-विमुखतामें बैठ जाना और केवल उन्हीं विमुखताका चित्रण समुझ समुझकी कमरे अन्तर्गत विराधिताको निवृत्तताके उससे सामर्थ्यकी उत्तम अपन गाम्भीर्यकी हृदयय बनने और निवास करनेवाली एक राशिकी मात्र मात्र बिला सकती ।

प्रेमचन्दजीन का किया इतना अधिक किया कि वह अपने युवकी जनताके सेवक और कवियोंकी भी प्रतिभा और भावजनकी बाधा कोटनके लिए बहुत कष्टों का । मेरातमे विठल उपकरण उन्हाण समाय सब सामाजिक आदर्शोंको लेकर । उनहोंने धर्मिक और निरंशुय उपकरणके रूपमे व्यक्तिवादकी यहि समझा लई बनन दिया तो बरीबीके व्यक्तिवाद की हिन्दी-साहित्यमे नीच अवश्य आसी । यहि सबकी रचना युगोतमे प्रकाशित होती तो विज्ञानताके सपर्यवर्षी एक अवास्तव आवाही को प्रमत्त का अवन समवासीन सैतकाम ऊँचीते ऊँची सतहपर से जाता किन्तु दु ग यही है कि हिन्दी-सभारम प्रेमचन्दके चिन्तनका भावजन प्रेमचन्दजीकी चारियाँ और कमजोरियाँ ईदलके प्रदर्शन तक ही जा पाया ।

आनी प्रतिभाकी पहुँच और आदर्श-विस्तार समाजमे आनी कमजारीकी साहित्यमे अधिकधिक सेव से आर्मके लालची सैतक से पपारा अनुकरण किया करता है । या तो है आनी माप्य आरीभी रगेमे या लमी हैगाइ अबका विनोमी गृणारमया कि विवेक और निरचयम आग्निवर सङ्गाईम यह साहित्य गुरु चल निवले । प्रेमचन्दजीकी रिम रचनाकाका ॥ पड़ा है उनमे इन लालचका बड़ी चित्त नहीं । उनको

रचनामें बमिकटाका मुखयाग उसका बस-संभवन नहीं है । बाहू वह बमिकटा यहबोके होते हुए भले ही जमीनपर बैठने लगे मोटरोंके होते हुए भले ही वैरक चलने लगे पकवानोंके होते हुए भले ही गमकके साथ मून्नी राटी खाने लगे । गरीबोंमें दिशा भ्रम करनेवाले ऐसे उरकरभोला प्रेमचन्दजीन उपयोग नहीं किया । कीर्तिकी बमिकटाकी प्रशंसा भी प्रेमचन्दकी केन्द्रीमें नहीं पायी जाती । जातिपत वेधेगत विद्यावत सेवावत कार्तिकी समस्त बमिकटाक मोहबाधते बचनेम प्रेमचन्दजीकी केन्द्रीको हम थोकसा पाते हैं । इसीलिए नेतृत्व और बमिकटा होनाका ही भारी समर्पण प्रेमचन्दजीके साहित्यमें नहीं मिलता । आदस-पुत्रक क्रांतिवादिकाके वर्णन प्रेमचन्दमें नहीं होते हैं वहाँ वे कड़ियोंकी सबनासक विपमताका या तो विषय करते हैं या कड़ियोंके बिरोधक लिए अपन पाषाण प्रेरणा उत्पन्न करते हैं । प्रेमचन्दजीके पात्र सम्यक् होनेका यत्न करते नहीं देखे जाते सामनेकी विषय परिस्थितिसे मुक्त होनेका यत्न करते ही देखे जाते हैं । प्रेमचन्दजीन अपने पात्रोंका विषय ऐसा किया है कि सामीप्य जीवनके वर्णनमें उनकी कृत्तम बीज बन जाया करती है ।

सच्चा कसाका मरकर भी नहीं मरता । बा सोच अपने आराधना बिन्दुसे रखा और सहायता माँगते हैं वे सर्व्व कमखार हाते हैं परन्तु बा प्ररना माँगते हैं व स्वयं भी जीवित रहते हैं और अपने आराधना-बिन्दुको भी पुनो तक जीवित रखते हैं । प्रेमचन्द मुक्त-हास्य-प्रमचन्द सहायक प्रेमचन्द मित्र प्रमचन्द विमोक्षी प्रमचन्द मानव मिठानकी मुहमुही प्रेमचन्द अपन साथी और स्नेहीकी बलबान् मुखा प्रेमचन्द उपप्यास पङ्कनवाली जमाअनकी योग्य देनेवाके प्रेमचन्द चले गये ! बाँव मुँदनपर प्रतिग्रह पोष पङ्कनवाके प्रेमचन्द लुनी जानो देवगकी बीज नहीं रहे । प्रेमचन्दजीके बगन अब कलाकी पुत्रक बैबल दिवराणी बैबोबी और उनक डारा कही जानवाली स्मृतिर्योमें पा लखेंगे । किन्तु जो अमर बन्तु प्रमचन्दजीके पात्र भी वह तो प्रेमचन्द अभी भी हैनेमें समर्प है । यि

प्रभुको खोकर भक्त प्रभु-विमोषका परम सत्य माननेके लिए तैयार नहीं होता तो प्रेमचन्द-जैसे कलाकारको खोकर हम उसके विमोषको सत्य माननेको कैसे तैयार हो सकते हैं ? ओ पीकी हार्थी रोझी और न आन किस किसकी पूजा करते हैं वे विश्व-साहित्यको सामने रखकर एक बार प्रेमचन्दके साहित्यको फिर देखें । हमारे मन विचारते हैं देखेंगे कि प्रेमचन्द यगितक अर्कों-बैसी स्पष्ट जागृत और व्यापक वह बस्तु हिन्दी-बस्तु और हिन्दी-बस्तुके बाहरकी पीढ़ियोंकी भी है सबसे है जिसे प्रेरणा करते हैं । यह प्रेरणा बसवान् और जमर अन्तिमपरिणी रहे, यही प्रभुसे हमारी एकान्त प्रार्थना है ।

## परिष्ठत रक्षिणकर शुक्ल

ब्रजा-सत्तामे बाहुबलको अपेक्षा बहुबलका प्रतिनिधित्व रहता है और य ठरह्ये परिष्ठत रक्षिणकर शुक्ल सम्प्रदायके बहुबल-बहुमतके प्रतिनिधि है। निस्सन्देह यह परपक्षीरककी बात है किन्तु चिन्तनकी आँखोंके सामने ब्रह्मरूपके धुल्लको इसकिए जन-जीवनमें बाध दे कि व परिस्थिति देखकी आवश्यकता और अपनी समझके बार-बार देखनमें अपनी पक्षित रहत थे।

कुछ लोग ऐसे होते हैं जिनके उपद्रवकी आचार नहीं चाहिए व ओर अपनी अवस्था ऐसी बनाये हुए है कि अपनी चाधी चकड़कोसे गरबको-के परिणामस्वरूप जिनके पास सामके लिए कुछ नहीं है वेकल गरबकोसे ओ पा पावे नहीं उनके लिए सम है। एक समय कमहार विस्वासके लिए अघोषित होनेका यह होता है।

दूसरे वे होते हैं जिन्हें वेकल परिवर्तन चाहिए। परिवर्तनकी अपेक्षाई मुर्छा-हाथ निश्चित अवस्थाका जिनके पास कोई साम नहीं वे तो परिवर्तन करके मारते। तुलसीदासक कथाव वच अवसंध रस हृदय अर्थात् अस्तर अन्तरात्तम सभ्य ज्ञान आधि-संयम साहित्यके नवेरस अथवा बरतके पांच रस और अथकी अपनेमें छुपाकर बैठनेवाला साहित्य बर्बकी अपनेमें छुपाकर बैठनेवाली कविता अथवा हारसोंका अपनेमें छुपाकर बैठनेवाली निम्नकी मुप-मोति तुलसीदासकी बारपास इन सबका कार्य संयत करना होना आवश्यक है। कुछ तो आरम्भसे संयत-काय होना चाहिए, कुछको मयल-कावोंकी गौरव-वृद्धि करना चाहिए और छेपकी संयत-परिधानोंकी अपनी होना चाहिए। किन्तु परिवर्तन करनेके इटी पापकी समाजके संयत-अवसंधसे कुछ लेना-देना नहीं है। वह तो जिन्दी जी

मुख्यतः बतमानमें परिकल्पना चाहता है। भले ही भाष्यबधातु उससे मंगल हो जाये भले ही वह चिर-अमंगलका कारण बन।

ठीसर व होते हैं जो भावनारहित योजनाके परापाटी ह्रास हैं। यद्यपि बड़ीसे-बड़ी वैराग्यापी और विरग्यापी योजनाका अपनी सफलताके लिए जन-जीवनक सम्मुख बार-बार कुटन टेकने पड़ते हैं और जन-जीवनके सद्भावका जो आधार बनना होता है शिथिल बाहरले योजनाकी आदत उबार स्नेहात्मा आदमी योजनाका बीमार है। राज्यायक जवाहर कालबोधी योजनाकी अपेक्षा कर योजनाके बीमार अपनी नहीं-अच्छी योजनाओंका ही सब कुछ समझते हैं। वे ईशानकी निमज्जना और धारणाकी समपन-धीन्ताको भूल जाते हैं।

चौथे वे होते हैं जिन्हें धर्मी बनना या शरीर होनेमें मजा आता है। रावणक खिलाफ रामका मण्डा बटे तो वे धर्मीराम नाम लिप्या लेंगे और यदि रामके खिलाफ रावणका मण्डा लड़ा ही तो उन्हें रावणही सेनामें भी पा सकते हैं। न के रामके हैं न रावणके व तो अपनी धर्मी होनेकी प्रवृत्तिके प्रति ही ईमानदार हैं जिस तरह राजनीतिक पाकी गलीब कर्मवाली कलम यदि राज जयका राज्य में पाकी-गलीबकी जय न मिले तो विरगकी घटनाओंकी पाकी-गलीबमें हिस्सा बंटाने समझी है उसी प्रकार मजोवाना समुच्चयि बरा हुआ विवादतान रहित व्यक्ति अपनी शरीरप्रवृत्तिके लिए देश बाल और पाककी उपवृत्तना-अनुसुम्नताके लिए नहीं टकरता।

पाँचवें व लोग हैं जो कभी भी कोई निश्चित निष्पत्ति नहीं कर पाते। उनके लिए यदि उनके प्रमाणमात्री बुलगायित रहने हैं तो ठीक रहते हैं। अमेरिकन राष्ट्रपति आइसनहावर रहने हैं तो व भी ठीक वन हैं और कश्मिर जवाहरलाल नेहरू रहने हैं तो व भी ही ठीक ही हो रहने हैं। इस अनिश्चित वृत्तिके लोगोंकी मर्यादा सिनी भी देगके सिनी भी समाजमें कम नहीं हुआ करनी। जन इनके समपन या विरापके अन्तर

कार्य करना कठिन होता है।

छठे से व्यक्ति होते हैं जो परम आकाशकारी हैं। उनकी दृष्टिमें पीता हुआ हाथू घयवान्ना अवतार है और द्वारा हुआ अवतार शम्भुसे भी घयंकर अपरुधी। वे यह कहफत सेठ ही नहीं कि इसकी भत्ताई या उनकी दृष्टि अबका इसका सम्मान और घयका उत्तरा अपन सिरपर के छेड़ें घत से निरीह मय अवस्थाओंमें खप जाते हैं। इनके विश्वासके वतपर राष्ट्र-संवाक्य नहीं होता।

सातवें से द्वादशे हैं जिन्हें केवल अग्नि चाहिए। अग्नि वह नहीं जो विश्व-रचनाके एक हिस्सेकी अपेक्षा दूसरेकी उच्चतर बनाम सम जाने। इनके लिए तो बड़ी अग्नि है जो व्यापित व्यवस्थाके हर कील-कटिको संकाइकर रेंक दे। इनका जन्मा है। इनका प्रथम कार्य है कि इसकी मित्र उसकी तरह कर घन होते हुए कामकी मन्त्र कर और अमुक समाज रचना-म लक्ष्मा बलम कर। क्योंकि जन-जीवनका असन्तोष इनका मूलजन होना है और उन असन्तोषको उत्पन्न कर चुकनेके परवाह इन्हें समाज या देश में कुछ देना-देना नहीं है। विश्वके परम तत्पर इन्हें तो अपनी रीटियाँ सैकनी हैं।

य सात अवस्थाएँ तथा ऐसी ही कुछ अवस्थाएँ और हैं। कुछ ऐसे लभ होते हैं जब समाज-व्यवस्थाका ईमान शकीडोल हान लगता है। कमी-कमी नाय-संवाक्यको अपने वाक्यमें घम पकड़ाइत और चिन्ता होने लगती है। समाजक व्यवस्थापक भयभीत और और लीनदवा होने लगते हैं। जब मंचर साम्प्रदायिक धार्मिक अथवा विमय स्वार्थका विरपीत रूप धारण करके भाई है तब समाजक प्रशासिका नियमन करनेवाके ठकका यह भय होने लगता है कि वे उहरके इन बड़े प्यालोंको पीनेसे असमथ है। तब तो यह है कि कटिगाह्या बड़ी बिबविनी होती है बड़ी लम्बू समाज अबका व्यक्तिका विरवास नमज़ार बढ़ जाता है। ऐसे समयके लिए हमें एक कार्यकर्तियों आभ्युपगता होनी है जिनके लिए कहा



मया है,

परपतिहितकर्त्ता द्वेषतां याति लोके,  
अनपदहितकर्त्ता त्यज्यते पार्थिवे द्वेः ।  
इति महति विरोधे विद्यमाने समाने,  
मृपतिवमपदानां दुलभः कर्मकर्त्ता ॥

ऐसा ही कामकर्त्ता समाज के हितकी अपने हितसे ऊपर रख सकता है । मैं यह कह सकता हूँ कि विरोध जबका समाजकी भूमिका से युवक के पश्चात् पश्चिम रविचंद्रकी पुनर्जाति कमिनिजिउ सामाजिक विद्रोहियों के बीच में करी आवाँदोक नहीं देता । मुझे तो यह चिन्ता है कि समय और विरोध के बीचों-बीच इस विमर्शप्रसे जब रहनेवाले व्यक्तिमोंकी मैं अपने बीच इन समयमें बहुत कम पा रहा हूँ जो भाई युवकजोकी-नी समय व्यय कर सके । कारकाइलके कथमानुसार यदि हम जीवनकी ऐसा अवसर माल हैं जो दुमरी बार नहीं मिलेगा तो हममें-से कितने हैं जो पुन स्वभाव वस्तुमोंको समझनेकी शक्ति और उच्च धर्मिक मर्याद यह कह सकते कि हमारा जीवन समय-वशके मुझे हुए पलोंकी डेरी नहीं, किन्तु पयार्थमें नौम केता हुआ प्राणवान् और परम पुरस्कारमय अस्तित्व है । मैंने बच्चोंकी तरह यह कहना कि आप्त अवसर केवल दुःख है अथवा सुख है, अपूरा है । जब ही ऐसी बात कहते समय हम केडाएकी दुहाई देते हैं । किन्तु यह है हमारा मिरा वानमगल ही । नृप और दुःख तो अगर वास्तव मिताइते मध्य व्यय की आर्जवासी हमारी धमना अथवा धमना हीनताके नाम हैं । हम भारतीय लोग सामाजिक दृष्टिकोणमें युवक नहीं हो सकते । हम अपने कार्योंमें अपने विरवालीकी अमरतामयी लय और आराधनाके बीचमें जब व्यय करते हैं तब हम अपनी दुमिरी अपने अंग-करण और चरने बाहर भेजते हुए गन्तीपका अनुभव करते हैं । मैं इस बातमें बड़ा मुग़ी हुआ हूँ कि पश्चिम रविचंद्र युस्वर्ग जनमानोंके प्रति अदृष्ट विमर्श है और अपने चार्ज-नीयताके प्रति अनिष्ट पड़ा । मैं अभीर

नहीं होते मयमीत नहीं होते बाबाईडोल होते जो प्रामः नहीं देखे जाते ।

मेरा परिचय पण्डित रविशंकर शुक्लसे सन् १९१६म हुआ । तब वे बड़ौदा बर्षके थे । ऐसे किये ही सब माम [ ] जब मैं समस्याओंको रविशंकरजीकी दृष्टिसे नहीं देख सका जबना वे समस्याओंको मेरी दृष्टिसे नहीं देख पाये किन्तु मेरा उनमें ऐसा पारिवारिक व्यक्तित्व पाया जिससे कहना भी जिसके हाथों मनुष्य अपनाको अत्यन्त निश्चिन्तासे सीप सकता है ।

कदाचित् बहुत कम लोग यह जानते हैं कि मध्य प्रदेशके हिन्दी साहित्य सम्मेलनके आगवाता पण्डित रविशंकर शुक्ल और उनका उत्काशीन साथी हो है । पण्डित सम्मेलन जहाँ तक मुझे पता है सन् १९१६ १७ में रायपुरम ही हुआ था जिसके अध्यक्ष स्वर्गीय पण्डित प्यारेलाल मिश्र बार एन ला हुए थे । पण्डित रविशंकरजीमें दो विरोधी भावनाओंका विचित्र सामंजस्य था । वे सोचते बहुत ठण्डे इतना ठण्डे कि लगभग पन्द्रह बर्षों तक मैं उन्हें बड़ा राष्ट्रीय ब्रह्मा मानती हो नहीं मानता था । सन् १९२ की सागरमें हुआवाली प्रांतीय राजनीतिक परिपक्व समय जिसके अध्यक्ष स्वर्गीय डॉक्टर मुंजे थे मैंने अपने दो प्राणप्रिय मित्रोंको अर्थात् पण्डित रविशंकरजी शुक्ल और स्वर्गीय पण्डित मनाहरकुण्ड पोतवलकरको 'कमबोर' के अग्रसैनिकोंमें गरम बसका सिखाया था । उन अग्रसैनिकोंको पढ़कर पूर्य पण्डित माधवरावजी सप्रेम मुँसे कहा था 'रविशंकरजीके विषयमें तुम्हें अपना मत बदलना पड़ेगा ।

हाँ तो मैं कह रहा था कि रविशंकरजीमें विचारोंकी ठण्डक बहुत थी किन्तु धूमरी और छिपाहीकी बहादुरी भी उनकी ऐसी अद्भुत कि ब्रिटिश सरकारसे जोहा लेता समय जिन्होंने उन्हें अटक और अभिय रक्षा तथा राजनीतिक परिवर्तनके समय और रायपुरम में उन्हें तत्त्वोंकी सेनाका संगठन करते हुए देखा वे उनकी छिपान्विरीय मुग्धता नित बिना नहीं रह सकते ।

## सेवाग्रामकी विभूति मश्रूवाला

सत्य और ईश्वरके पक्षपर आचरणका बल लेकर चलनवालोंमें-से एक ठीक मानो और हमारे बीचसे उठ गया। सेवाग्रामकी विभूतियोंका यह विदोष हमारे सम्मुख क्रमापन्न-सा ॥ गया है। साधुपना जमनाकाकत्री बहादुर भी महाबल भाई देमाई माता कस्तूरबा महारमा घांभी और भाई भी विद्योतरत्नाल मधुबाला इन तरह कम ४२ से लेकर कम १०५२ तक हमन सेवाग्रामकी पाँच विभूतियों ओपी और सेवाग्रामकी अन्तरंगकी इन पाँच विभूतियोंके सिवा सेवाग्रामके बहिरंगकी एक महान् विभूति तरदार बालकनबाई पंथकी हमने गोया। किसी राज्यके जीवनकी हानि-लाजकी मापाम हमारी ये हानिमा अत्यन्त भयंकर है।

महात्मा गांधीने मधुबालाजीका परिचय इन शब्दोंमें दिया था "विद्योतरत्नाल हमारे दुर्लभ कार्यशीलतामें-से एक है। न बचनेवाले वे अपनी भूलोंके प्रति बड़ लज्जत हैं। जानि समाज और ग्रामीणताके अविमानने मुक्त व स्वतन्त्र विचारक हैं। वे राजनीतिज्ञ नहीं किन्तु जगमें सुधारवादी हैं। वे सफल क्योंकि निष्ठावान् हैं। जगत्मा अहंभावसे वे सबका भूलत हैं। प्रत्यक्ष प्रगति और उत्तरदायित्व सेनसे सदा बचनेवाले किन्तु एना कोई दुमरा आदमी मुश्किलसे मिसगा जा उत्तरदायित्व से सेनके परवान् जेन बैसा निवाहुता ही जेना मधुबाला निवाहुत है। 'परिचय' का बड़ कहना लक्ष है कि जब हमारे पास स्वराज्य पानेकी एक ही समस्या थी तब एम दुर्लभ कामगारों परम आश्रयवता थी। जब स्वतन्त्रताके बाद लक्ष्मणोंके पागल हण्डर दूट पड़े हू। तब विद्योतरत्नाल माईका हमारे बीचमे जाना बहुत बड़ा भंड है।

विजय संवत्के दिन है ये। व्यक्ति ऐसे बीगहैर कहा है जहाँ

भूखकी बाजार-दर बढ़ गयी है। पायी हुई स्वतन्त्रताकी बाजार-दर घट गयी है। पेटके ऊपर हृदय और सिर रखकर चलनेवाला भारतीय मानव मानो हृदय और सिरपर पेट रखकर चल रहा है। साथ पहाड़ीकी बाजार-दर बढ़ी हुई है और गरिबकी बाजार-दर गिर गयी है। हमारे धर्मकी बापट्टाका रूप यह है कि भूमि हम सबों एक-एक समझे अधिक जोतल गयी है। जितनी कि हम सन् ४७ या सन् ४९ के पहले जोतते थे किन्तु अनाज सबसे कम पैसा करते हैं। जितना सन् ३९ के पहले कम भूमि पैसा किया करते थे। संविधानके पन्धियोंकी वे चिर बिछाएँ बिनाबा और अबाहुरकार धार्मिक संघट बघाती हैं और शैक्षिक कल्याण बीज मारी कर देती है।

संस्थाएँ जो एक दिन स्वराज्यके पथमें बहिष्पन्धियोंकी बलि चढ़ाया करती और देशकी जन-जन नवीन प्रेरणाएँ प्रदान किया करती थीं आज रजिस्टर भरल और अपने दलके गुणाहपार्योंकी दिवली लपानका जूहा बन गयी है। जब हमारी संस्थाएँ अच्छे मजान चमकती हुएन पैसका कारबार और कार्यकर्ताओं व मताभाके बोझिल-ह्रास घटित कम हाक-बमके या लकड़हास हो गयी है। श्री मधुबाका वहाँ एक तरह राजीवम शक्ति लेकर कभी-कभी शासन और हमारी संस्थाओंकी आमाचनाएँ किया करते व वहाँ से जनताका स्वीकृत दंड क्रिये छनक लिए धामन और कथिमके प्रति जनताके सहयोगका भूख समझाते रहते व।

हमारे देशके कुछ लोग जाननाते वस जाते जापान जाते होमेश्व जाते। संविधानके भीतर तथा संविधानके बाहरके इन विद्वान-प्राधियोंपर विद्वानोंके एक दुर प्रभाव पड़ते कि व जाना यदि पश्चिमी देशोंकी बंधामें नष्टकर जात और पूरवके देशोंकी अमनाम गहाते तो चीनी या कभी अमनामान बनकर लौट जात। ऐसे समय त्विर बुद्धिधेयसे राजका परिचयान करनेवाले श्री विचारमान जाई जैसे नायकता हमारे बापसे उठ जाना

निस्सन्देह हमारे लिए बड़ी हानिकारी बात है। यदि संस्थायोंके माध्यमों और उपनायकोंमें आप बैठें तो वे सब बात करते हीच पहुँचे इसपर भुर्माना करो उसे दण्ड दो इसपर नजर रखो उसपर पहरा दो। मानो पाँच वर्ष पहले जो जय-जयकारका अधिकारी था आज वह कास्टेबलके-द्वारा घेरे जानेकी वस्तु हो गया है। मधुवाकाजी क्योंकि मानवताकी ध्येष्ठतामें विश्वास करते थे अतः कार्यकर्ताकी ध्येष्ठताका संशय उससे सामग्रीत करने और उसका गुण-वर्णन करनेमें कभी नहीं चूकते थे। सर्वोदयकी मानमान देशमें जिसने ध्येष्ठ कार्यकर्ताओंका निर्माण किया उनकी दो ही आवाज बिकाए है—गुनाकी कोमलता अविनम्य और जीवनका क्रूरतर आत्म-विरक्त्यथः। हम जाने क्यों नहीं समझते कि कड़े इमून और भयंकर सिद्धियाँ कभी किसीके जीवनमें देवस्वको जन्म नहीं दे सकती। ईमानदार रहकर भय करना और माई मानकर भय और संकटमें साक्षीदार होना ही हमारा बल बढ़ा सकता है।

जिस अन्तर्राष्ट्रीयताकी न जाने हम कितनी चर्चा करते हैं उस नवीन अन्तर्राष्ट्रीयताका जन्म भी सेवाधामकी वृत्तिमें हुआ है। अन्तर्राष्ट्रीयताकी पृथा और पृथाकी अन्तर्राष्ट्रीयता संसारन हमें दिखा दी किन्तु जाति और धर्मों पर स्नेहकी मानना हम सेवाधामकी यत्किमल सिन्यायी। विद्याका एसा विद्याका एक महान् नायक एक महान् नायक हमारे बीचमे उठ गया।

उन्हें छोड़ हमने बहुत को दिया। वे हमके भयंकर बीमार रहे, किन्तु एसा लगता है मानो दसवीं सप्तम्याओंके मुलसाव किण्वनवा जल जिस बीज अपने तिरपर लेकर अधिक नाम कर्त्ते-करते उन्होंने अपनेको मार डाला। यदि हम अनुमय कर सकें कि हमने जाई विद्याकाकाजी मधुवाकाको छोड़ बहुत का दिया है ता यीशू ही धनवीन मन्त्रवर्तनी की ऐसी धृष्टा और स्नेह भरी पीढ़ी बीग पवनी चाहिए या जल बोधनमें मानवक पुरपावसि 'ही' बहलाने और उसे जलजल विनारील बनानका बल रखती हो किन्तु नाथ ही पनवील ननिबोंमें रखने ममकों नाबियों

और सामान्यसे पतन-प्रवृत्तिमें निश्चिन्ता ना' कहनेकी अनन्त अज्ञानमी प्रवृत्ति भी अपनेमें रखती हो । नवोदयका बल और गांधीबाबूकी अनन्त दायता भारतीय स्वतन्त्रताके रक्षासे याँव करती है कि भाई मधुबाळाजी की सभाविपर बैठकर हम अपने युगकी राजनीति और स्वराज्य-उद्धार-कर्ममें अनन्त परिश्रम निर्वहण कर सकें ।



## राष्ट्रसेवक डॉक्टर भन्सारी

‘डॉक्टर भन्सारीकी कृत्य (राज्य) मूर्च्छित कर देनेवाला आवाज है । महारमाजीने डॉक्टर भन्सारीके अकस्मात् अवसानपर इन शब्दोंमें अपनी भावनाएँ व्यक्त की थीं । ८ मईको डॉक्टर भन्सारी रामपुरके बवाबके यहाँ मरीजोंको देखने मसुरी गये । दिन-भर वे रोगियोंकी देखभालमें व्यस्त रहे । इस वक़्त देनेवाले समय उनके टूटे हुए स्वास्थ्यपर अत्यन्त प्रहार किया । ९ की रातको जब वे मसुरीसे रैहण्डूल एक्स्प्रेसपर दिल्ली लौट रहे थे तब बीचमें ही बीनपुरसीन स्टेशनपर, सड़े बारह बज रातको टूटपड़ी मति एक आनेसे महारमाजीके शरीरमें कुरीतोंका समोसा भन्सारी जिसकी गोदमें महारमाजी अपनेको सुरक्षित समझने से बल बसा । महारमा गान्धी डॉक्टर भन्सारीको हिन्दू-मुस्लिम प्रेम पर अपना ‘रहनुमा’ मालते थे । रहनुमा ऐसा सच्चा — ‘जो कभी झूठो नहीं करता था । अपन इस अवसरपरके साक्ष मिलकर महात्मा जी राष्ट्रकी बढ़ती हुई सामाजिक सुरक्षामें अकस्मात्से ठेकारियाँ’ कर रहे थे बिन्दु

‘आखिरका ज़ेम की

किस्मत का कगूरा दूग

मौत का कुब्ज न गया

भाग हमारा पूटा ’

ठेकारियाँ पड़ी रह गयीं मनमूबागर ओले बड़ गये राज्यको जानुबोमें जिगोकर भन्सारी उगरी बीड़ छापी कर बना ।

डॉक्टर भन्सारी बहु रात्र रात्र वे जिनके साधनात्मक जीवनमें कभी विचलना नहीं आयी । उनका साधनात्मक जीवन १९१९-१९

के प्रारम्भ होता है। विद्यावतय धिया समस्त कर के भारत माये ही के कि टर्की-बाकयन पुत्रके अवसरपर अधिक भारतीय मेडिकल मिशनके अध्यक्ष होकर उन्हें टर्की जाना पड़ा। इन मिशनका काम इतना सफल और सन्तोषप्रद हुआ कि टर्कीके मुस्तानमे डॉक्टर अम्बारीको किसी भी विदेशीको दिये जानेवाले सर्वश्रेष्ठ सम्मानसे सम्मानित किया। आज भी उन समय सेवाओंको याद कर टर्की डॉक्टर अम्बारी उनके दल और भारतके सापने कृतज्ञतासे वसमस्तक है।

अम्बारीक राष्ट्र-प्रेम और सेवाकी लगनमे अपने परिवार कीये कभी असावधानीकी दृष्टि नहीं करने दी। अनुभवके साथ वह निपारी। उसकी उदारके साथ उसमे वह गम्भीरता बनरी जिसने बटमाऊँकी ओट केकर कभी भी अपनेको गुमराह न होने दिया। साथ ही वह अपनी विद्या बनी कि राष्ट्रके निम्न-निम्न लोगोंको भी उसने सफलतापूर्वक अपनाया।

भारतीय राजनीतिमे डॉक्टर अम्बारीका प्रभाववाली प्रथा सन् १९१८ में हुआ। दिल्लीमें राष्ट्रीय महासभाके अधिवेशनके साथ अधिक भारतीय मुस्लिम जीवनका अधिकेशन हुआ। डॉक्टर अम्बारी समस्त स्वतन्त्रताप्यल बनाये गये। उन समयके अहिंस और मुस्लिम लोगने दिय गये अवक मापनोंमें बनेने डॉक्टर अम्बारीके स्वागत भावनोंकी ही सरकार-द्वारा बहुत होनेका सीमाय प्राप्त हुआ। इसी वर्ष आप अधिक भारतीय कॉलेज कमेटीक ब्याइन्ट सेक्रेटरी चुन गये। इसपरन्तु आप सन् १९२७ तक—जब तक कि वे स्वयं कॉलेजके सम्पादित न हो गये—रहे।

सन् १९२७ की महासदी अस्तित्वी काक्रमने भारतीय महत्वाकांक्षाओंकी भावीरोंकी विद्वत्के सामन परम्परा और यथाय कर्म प्रकट होनेका अवसर दिया। उसके पहले तक हम साम्राज्यात्मक स्वराज्य का कावर मन्त्र जान करके अपनाही आनवासी नीतियोंके उपहासका साधन बना रहे थे। महासम हमने इस गर्वुसक योग्यताको त्याग कर नीतियत किया कि हमारा लक्ष्य मुकम्मिक आजादी—पूर्ण स्वराज्य—है, जन्मसे कम कुछ नहीं।



पूज स्वराज्यका यह वर्षीका प्रस्ताव उसी 'राष्ट्रीय मुसलमान' डॉक्टर अम्बारीके महत्त्वमें स्वीकृत हुआ जिसकी निगाह हिन्दू और मुसलमानके भेदसे सदा पाक रही और अपने जीवनकी अन्तिम बड़ियों तक जिसके हृदयमें हिन्दू-मुस्लिम प्रेमको मुसलमानकी तकलफ मीजूर रही।

सन् १९३३ में कांग्रेसक डिप्टेटरकी हैसियतसे डॉक्टर अम्बारी अपनी बकिङ्ग कमेटीके साथ विरक्तार कर लिये गये। इसके बाद योगी-हरविम ममसीता हुआ जिसमें डॉक्टर अम्बारीका बहुत बड़ा हाथ था।

सन् १९३४ में कांग्रेसन व्यवस्थारिका समायोपर करना निश्चय किया। उसने लिप् जो पार्लियामेण्टरी बोर्ड बना उसके समायोधि भी बना दी चुने कम। मेहक रिपोर्ट तैयार करनेमें डॉक्टर अम्बारीका जो महत्त्व पूज सहयोग का उसका परिचय सब मिला अब कलकत्ताकी कांग्रेस-हाउ रिपोर्ट अस्वीकृत करार दिय जानेके बाद कुछ दिव डॉक्टर साहबको यह खबर देन पहुँचे कि हमन आपकी रिपोर्टको राष्ट्रीय तरंगके साथ बहा दिया।

सन् १९३३ से लगाकर सन् १९३९ के अपने जीवनके अन्तिम दिनों तक वे बराबर कांग्रेसके साथ रहे। ऊपरक विवरणसे स्पष्ट है कि हम अवधि में कोई भी ऐसा राजनीतिक महत्त्वका नाम नहीं हुआ जिसके डॉक्टर अम्बारी चाहिये या बायें हाथ न रहे हों। वे प्रांतीय नेता थे राष्ट्रीय नेता थे और अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व भी उनका कम न था। आजकी जनजीवी परिस्थितियोंमें राष्ट्रीयक डॉक्टर अम्बारीको छोड़कर राष्ट्रको नेतृता सब कुछ माहृत हो उठी है।

## में आगेका जय-जयकार

महान् वैदिकीकरणकी पुस्तकी कविता सर्वप्रथम मीने १९७७ में पढ़ी। उस समय में गाँवसे गया-जया ही कहलवा जाया या कहलवा म्युमिस्पर्कटीके कैप्चियर मेरे मित्र श्रीतेलाराम पारगीर 'सरस्वती' मासिक पत्रिका में बचाते थे उन दिनों स्वर्गीय बाबाय महावीरप्रसाद द्विवेदी-शारद सम्पादित इण्डियन प्रेसकी प्रकाश पत्रिका 'सरस्वती' में पुस्तकी कविताएँ प्रकाशित हुवा करती थीं। स्वर्गीय श्री जयप्राधप्रसादजी 'भाषु' कविके कार्यालयके कुछ मित्र तथा पारसीरजी सरस्वती केकर बैठते और जयभाषाते हटकर बिलकुल नवीन रूपमें आनेवाली हिन्दी कविताका रसास्वादन करते उन दिनों पुस्तकी कविता नवीन चरणोंकी बापीका मूल्य थी। केवल किसी एक पुस्तककी कविता ही जोयोंकि मनको मोहती हो ऐसी बात नहीं प्रत्येक पुस्तक हिन्दीमें बहुत सम्मान सम्मान और ओझके साथ पढ़ी जाती। जयप्रकाश रंघमें मंत्र और पुस्तकीकी पुस्तक कविताएँ सोमोंकी बहुत जाती। मानो जयभाषाके बाहुल्य और प्रमुखके सामने जीव जड़ी बोधीमें लिखो हुई हिन्दी कविताकी प्रतीता ही कर रहे थे।

उन दिनों स्वर्गीय श्री श्रीवर पाठक स्वर्गीय राज देवीप्रसाद मूल स्वर्गीय श्री कामताप्रसादजी मुख और प्रतिभा-गुरुय भाबुरामजी 'शंकर' शर्माकी कविताओंकी विशेष भुव थी किन्तु ये पुस्तक जयभाषाये भी कविता लिखते थे और जड़ी बोधीमें भी। जड़ी बोधी और केवल जड़ी बोधीमें कविता लिखकर निर्भीकतापूर्वक किन्तु अत्यन्त मज्जासे बड़े रहनवाले एक भाव पुस्तकी ही थे। जिस समय 'भारत बापटी' निकली उस समय ही समा बैठे राजनीतिक और सामाजिक विचारवापमें एक पुष्पन आ गया। समा-मूर्धिरर धक्का 'भारत-बापटी'के उन्मोचन हुना

उपयोग करते माना उनके कहनेकी सामग्रीके धीरे-धीरे और प्राण केवल हिन्दीकी काव्य पुस्तक 'भारत भारती'में ही है। उन दिनोंका खयाल ही कोई हिन्दी समाचारपत्र हो जिसने गुप्तजी और उनकी कविता तथा 'भारत-भारती'की प्रशंसा न की हो। जब यह पुस्तक निकली तब गुप्तजीके और हिन्दी शब्दोंके आचार्य महाबोरप्रसादजी द्विवेदी इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने अपने दिव्य गुप्तजीकी प्रशस्तिमें सुरद्वयीय कलाचित् शब्दों कीलिका वृत्तमें एक छन्द जिस शब्दा जिसका अन्तिम पंक्ति थी

“मीमैचिलीसरण्णुष उदारवृत्त ।”

यों आचार्य द्विवेदीजीसे प्रशंसा पा केना उन युगमें जबका उनके बीते जो अत्यन्त कठिन काम था बिन्दु गुप्तजीको द्विवेदीजीका परम आशीर्वाद प्राप्त था। द्विवेदीजीने गुप्तजीको अपने युगके प्रति अत्यन्त ईमानदार और आमुक्त धारणा और लगा कि उन्हें वह चीज प्राप्त हो गयी जिसकी वे हिन्दीमें आवश्यकता अनुभव करते थे।

मैंने मीचिलीसरण्णुषकी कोई रचना उस युगमें आज तक एसी नहीं पढ़ी जिसमें इतना आका उपमाग हुआ हो। केवल उनकी शोचनकारक रचनामें उन्हें यह कहना पड़ा है

दब मति जाय मेरा बारी कागह भारो हाय  
तू भी दे सहारो सल्लि रोल बड़ो मारी है।

आज जिस क्रांतियुगमें हम विचारण कर रहे हैं उसकी प्रारम्भिक चढ़ मीचिलीसरण्णुषकी गुप्तजी भोजनगी नहीं। तब पूछा जाय तो युव उनके कम्बोतर बैठकर आज अपनी दूर आया है। युवके प्रारम्भमें ही उन्हें श्रृंगारकी कविताको जिसकी हरसुधारक भर्त्सना किया करता था डाटकर रहा

मिथ चन्द्रबदन की चटक नहीं हो जिसमें  
मार्गिम-सी लट की लटक नहीं हो जिसमें  
भू और रणों की मटक नहीं हो जिसमें

मन्मथ-महीप का कटक नहीं हो जिसमें  
उसको कायता ही नहीं आप बतलाते  
कविराज आपके चरित न जान जाते ।

यह पूरी कविता जब 'सरस्वती' में छपी तो लोग यही-कृष्णोंमें इसे मस्त  
होकर मुनमुनाते और गुप्तजीको देखनेके लिए तरसते ।

राजनीतिकी किसी महत्वाकांक्षाके शाय न होनेके कारण गुप्तजी  
साहित्य-समयमें सगाठार लगे रहे और आज तक छने हैं किन्तु रचनाकी  
प्रकारताओंके कारण वे शासनप्रिय बनकर नहीं रह सकते थे । यत्रांतक  
कि भारत भारतीके अन्तमें बर्चस सोइनीके कारण तो साँसोकी पुलिस और  
साँसोके कलेक्टर भड़क गये और गुप्तजीको कारावासमें भिजवा दिया ।

जब स्वर्गीय गजेन्द्राकरजी विद्यार्थीनि कामपुष्पे प्रताप' प्रकाशित किया  
तब उसमें समय-समयपर गुप्तजीकी कविताके वर्णन होते । प्रताप के प्रथम  
विशेषांकके मुखपुष्ठपर बलिष्ठ अक्षरोंमें सत्याग्रह-आन्दोलन बखानेवाले  
कमलेश मोहनराव करमचन्द गांधीके नामसे उस समय विख्यात महारमा  
गांधीकी प्रशस्तिमें गुप्तजीकी या कविता प्रकाशित हुई वह मानो हिन्दी  
जगत्की सन्मार्गही नय-मार्गमें ऊँच चले । मेरे लिए तो उस समय गुप्तजी  
सब कुछ थे । वे प्रेरक थे, मार्गदर्शक थे और क्या नहीं थे !

उस समय मैं तुलसीदासों किन्तु तो कथा या किन्तु बातावरणकी  
बर्चिके अनुकूल दृष्टिकोणमें ही लिखता था । गुप्तजीका नया पत्र मुझ बहुत  
माया और यद्यपि मरी और उनकी छत्रमें हा-तीन वर्षों ही का अन्तर  
होगा मेरे लिए वे मरिच ही यथाकी वस्तु रहे हैं ।

मेरे प्रथम बार मैथिलीशरणजी गुप्तको लखनऊकी काँग्रेसमें देखा ।  
वों उससे पहले मैं स्वर्गीय भाई गजेन्द्राकरजीसे स्वर्गीय वं महाश्वोर  
प्रसादजी द्विवेदीसे तथा अन्य कुछ मित्रोंसे भी उनके विषयमें बहुत कुछ  
सुन चुका था । गजेन्द्रजीकी दो-तीन वष पहले मैं लखनऊके हिन्दी साहित्य  
सम्मेलनमें देखा चुका था । जब मैंने गुप्तजीकी अग्रजता काँवेसके समय देखा

तब मुझे याद पड़ना है कि स्वर्गीय लघेन्द्रचरणजी विद्यार्थी स्वर्गीय चिन्मारा-  
बन्धी विध स्वर्गीय लालीमाधजी महर्ष स्वर्गीय शास्त्रिपरामजी बर्मा स्वर्गीय  
बम्मापक रामरत्नजी और विभूत उपन्यासकार अमृत बृन्दाचलसाठजी  
बर्मा उनके साथ थे। गुप्तजी सब समय तक जाग जागे हुए थे। लोह-  
बीचमकी सरसताले मुझे दो ही बार औरके हाटके दिये हैं। एक बार  
गुप्तजीको आरम्भ करके पाकर और एक बार दुपलनी टोपी घुटने तक बोली  
तथा बिकुटली हुई सुती मिरबई पहले हुए स्वर्गीय जयि सत्यनारायणजीको  
बाई बनारसीदासजी जयुर्वेदीजीके नाथ देवकर। सब समय राजनीति  
पर मतभेद स्पष्ट ब्रिटिश-मुसके हाथनी अंगराजीके काठे छिाकर बीचम  
बिताया ही चोटों और बटमारोंके सिवाय अल्पिकारियोंका बेधा हो रहा  
था। ऐसे समय प्रताप का बाध थातो अल्पिकी बलवान् अभितापाज  
बाग का और गुप्तजीका उस परिवारमें सम्मिलित रहना नथी कारिकारिकता-  
का अत्यन्त बलवान् बन था।

यै जब भारतेंदु-मुनने आज तकके हिन्दी काव्यके लोकोक्ति छोड़ फिावे  
बीठता है तब भारतेंदु इतिहासके वरणात् मुझे अँधेराईपर मैक्सिमोरनजी  
सबे दिनाली देते हैं। यों अबमाया छोड़नेके साथ हिन्दीके रस और  
गह्वरका इना बड़ा उजाला छोड़ दिया है कि हमारे मासिक सारे प्रयत्नोंके  
बावजूद भी अभी हिन्दी कविता रस राम अनुभूति आदम्भ और प्रपञ्च-  
में प्राचीन कविताके पास नहीं पहुँच पायी। हमारी दोमा इतीमें है कि हम  
इस तन्त्रको पचास वर्षके वरणात् नम्रतापूर्वक स्वीकार करें और गहपूर्वक  
आगे जानेवाली पीढ़ियाँको अपनी सीमा रैगावा ज्ञान करायें। हमारा  
अर्थकार मुझारे वज्रावमें भुल हम सबमें जो एक आनन्द-वर्मेक मुद्रक  
है वह तक गह्वरमें सचान मौलिकताके बावजूद भी हमारा रस और रस  
पानी बरामित-सा ही रहा है। आगे हिन्दीके लीजे-आदे एवर्गेरा बीजा  
होते-बीते पीढ़ियाँ मह कल्पकता ही नहीं ला रही जो रसनी तमस्त  
अस्तिथीके साथ काव्यका अवतरण कर लके। एक पीढ़ीके मृगार पिता

और घटती हुई तस्माद्दयोंनि यह रीतिकालकी कविताकी मरुता की तो सबके साथ-ही-साथ अपनी काव्यकलामें श्रृंगारकी ऐसी बाईं बायीं कि यह पढ़वाना कठिन हो गया कि बल और समयकी कमियोंके सिवाय रीतिकालीन कवितामें और दोष ही क्या था। किन्तु ठिरान्धरमें या अज्ञेयोंमें यर्मों या लक्ष्मणोंमें शीशों या अश्वमेधमें द्वितीय ब्रह्म को कुछ भी कहा गया ऐसा क्या। मानो गुप्तबीजा कीक सनकी सङ्ग्रहण और सनका सन्साह-बान अपनी वीक्षणीका पुरक-तन्त्र बनकर जमर है।

अपनी छत्र मुकुटम्बियोंका जो भी मोह मुझमें बिछाना था उसे जड़ी बालीकी ओर मोड़नेका सम्पूर्ण ध्येय थी मैपिलीसन्धकी मुद्राकी है। यद्यपि मेरा बलपल सनकी वरम धायासे बेचकर भी बोरी-बोरी मुझमें विरपावमें सर्वत्र सिवारामसरबजीकी कविताके साथ रहता था। गुप्तबीजा कविता-के कस्तुरी सारकारिक कविके अङ्गुष्ठाके साथ नहीं बाँधा। वे अपनी आत्मा बना कृतिके इतने सज्जन रहे कि अपनी रचनामें सर्वत्र अन्वेष और पूजा आचना प्रदान करनेवाले व्यक्तिमों वस्तुओं और मर्यादाओंके प्रति ही बनने अपनेको व्यक्त किया। जो रामके प्रति सनका स्नेह इतना व्याप्त हो गया है कि मुझे मुझमें हँसकर भी वह मानते हैं कि जीवनको कथनके प्रति ईमानदार रतनेमें सनको अद्भुत सफलता प्राप्त हुई है। विट्ठल-मुक्ता काव्य-मुष्पाव अब सिद्धिवाँ घर रहा था रीतिकालीन मुझमें हिन्दी काव्य पबड़ा-ता गया था और अब काव्यके नामवर रति-विकसतके कुम्भीपाक मरुतोंका निर्माण काव्यकला कहा जाता था तब विद्वत् व्यक्तिने अपनी मैथिलीकी धरा भी काँवाडोल नहीं होत दिया उसे मैपिलीसरम मुप्त कहते हैं। राजनीतिज्ञोंके भाषणोंकी पहुँच बाईं जेसी होती हो पर वे धामे और बाइयमे नहीं आते किन्तु "सरल कथित कीरति वियत सीढ़ आदरहि सुवान" के प्रशस्त बलकी मुत्तबी बिबाहरी रहे। मैं सब रचनाकारकी सर्वत्र प्रशंसा करता रहा हूँ जो अपनी रचनाओंका पत्र नहीं बदलता। पत्र न बदलनेवाले रचनाकारोंकी वीक्षियोंकी औरान्वित करनेवाले कुछ जोप

मुल्तमीके परचाव हिन्दीमें हुए है और उसकी कवि उत्तरोत्तर हो रही वर-  
दान में प्रमुख सांगता हैं ।

एक बात तो यह है कि यह मोहू निरा श्रवण है कि हिन्दी कविता  
सदैव एक ही ढाँचेपर चलती रहे । इंग्रजमुपके रंगोंकी तरह बहुत-बहुतके  
वर्णोंकी तरह आली-आली बहुतोंकी तरह हिन्दीका मौलिक रंग क्यों न  
विद्युत् क्यों न लूके क्यों न लूके ? परिवर्तन न केवल भारतवर्ष में किन्तु  
विश्व-भरमें आया हुआ है और गया युव उसका स्वागत कर रहा है गुन  
है । किन्तु हमें यह यादबानी लेनी होगी कि विरहकी जूझन गमैटकर हम  
विश्वको उपहार देना स्वाप न करने लें । भारतवर्षकी और एशियाकी  
मौलिक भावना बलिदान और समर्पण है । विरहका कोई भी भगवत् काव्यके  
चिर आयुन उसको इन दो जुगाधोंपर रखा नहीं रहता । जब बुद्धजयन्ती  
का उत्सव और १८५७ के विद्रोहका उत्सव एक ही वर्षमें माघ-माघ  
समानकाले भारतवर्षके सुसम्पन्नीसे यह आशा करनी चाहिए कि जाना कि  
विभिन्नता केवल नहीं है विभिन्नता कारण विद्रोह नहीं है एक-स छाया  
भी अनेक रसोंका आरोप हो सकती है अनेक भावना का घर है । पुष्पीगे  
समाकर आशा एक समस्याओंकी आ लेने आकाश निज्जूर मत्त और  
कदमाको लेकर मज्जगा छो है इनके आगे बढ़ने बरनाले कोनकेपी नामकी  
सामर्थ्य किसीमें नहीं होगी किन्तु हम यह न लें कि किसी बटोर स्वा-  
पित्वमें ही हम बँधे हुए हैं हम माधव । हम बोलते ज्ञानार्थ ही हैं वेगने  
आँखोंमें ही है मुनते कालमें ही हैं । इनके न आकारमें हमारी मौलिक  
इच्छा चल पाती है और न प्रकारमें । जब आगे बढ़ना हुआ युव जगने ही  
मुपोंको और इनके मुपोंका अत्यन्त मुहावर आने बड़े । यों पुष्पीका  
व्यक्तिगत ही हमारा मग्न है कि चलट-वन्द करती हुई समस्त मनीष बीड़ी  
का भीने आने मन्त्रजनीवित्त पक्षोंमें व यह बढ़कर स्वागत करते हैं कि  
'जो पीछे आ रहा उम्हरी कद, मैं आगे कद जय-जयकार ।'

## श्रीयुत रामचन्द्र शुक्ल

बहु जमीरों वाली खोजता साहित्यिक युगपर अपनी लकीर खींचता । बहु स्तर नहीं बखर लिखता । उसकी खोजनी रसमयन बनकर साहित्य को नवारी-नवारीपर बरस रही है । बहु किमी पथपर चलनके लिए बाँध नहीं मँडता किसी विचारके मस्तकपर साहित्य बनकर उतरनेके समय बाँध मँडता । उसकी लगन लिपिही उसकी कलम बोलती । बहु हिन्दी साहित्यका संयमशील स्वर है उसकी बात राष्ट्रभारतीका पुष्टिकर व्यंजन है, उसमें साहित्यके सर्वांग निर्माणको प्रबोधमयी भाषा है । उसका भावार्थ उसकी लिखावटमें सुन्दर उसे छन्द बना देता है । साहित्यिक घटनापर प्रकाश पहुँचाने छत्रहस्त मस्तक ऊँचा रखन तरमाणी मरचीनर न झुकने लहरोंके जगमाचमें भीकाफी तरङ्ग न हिलान-डुलाने सागरके ज्वार में बहाबी बेटोंकी तरह प्रत्येक साहित्यिक परम विवादमें भी उसकी समीक्षा अधिकारी है । बहु राष्ट्रभारतीक गीतका जम्बक भाषा संयमशीला सरस्वतीका पदविधान और साहित्यकी आवश्यकताका करण मोल है ।



## जयशंकर प्रसाद

स्व श्री जयशंकर प्रसाद उन कवियोंमें हैं जो गरीब खर हैं न वे गरीब कहते हैं न उन्हें कभी गरीब ही आ सकता है। दिन पाछोंपर, दिन भूतकालीन शायोंपर प्रसाद अपनी रचना किया करते थे वे धार्मिक मात्र भी सम्भव हैं और प्रसादका पार्थिव शरीर कहीं भी रहें किन्तु वे ही धार्मिक प्रसादके पद्य-शरीरसे निकटकर बड़ीछक पैदा होती हैं। बड़ीछक प्रसादकी कविता और समझनेको लगन और साक्षात्ता है।

कहाते हैं अंगरेजीके मुद्रसिद्ध अंग्रेज नाट्यकार श्री विरलके अति परिचित लेखक बर्नार्ड शॉने एकबार डिफायण्ट की कि वेरी रचनाओंको बिना समझोंमें से आकर सम्पादकोंने मुझे बिछावियोंमें अग्रिय बना दिया किन्तु कहन दो या कहनना मरनाका कथन-धीमी हो या कथन स्वयं काव्यका शरीर हो अथवा कतकी आरमा प्रसादकी कवितामें काव्य और अन्तु ऐसे बुल-मिलकर मिले हैं कि बिछावियोंके बीच भी उन्हें अग्रिय नहीं बनाया जा सकता। प्रसादकी बीड़ी प्रसादकी रचनामें अपने पारम्परिक स्वरूप उसी प्रकार दुगार करती है जिस प्रकार शीतल पार्थिव भाषा दर्पणके माध्यम से प्रसिद्ध होकर अपनेको अंगरेजों से लगता है प्रसादका काव्य इनदिग् मुन-यस खर है यथाकि गुर्जे कौ से सँवारती है अथवा की धनिकता कृष्टिको मोचन देती बनती है और वह निमूह तन्त्रोंको भी इसी खरकाने कहती है कि रचना कहन बड़ा अर्थ पाठकके बरमे वह आता है। पटनाई रन विद्वत्शालीके कवियोंकी तरह प्रसादकी रचनाओंके साथ आकर वह जानी है कि इति-मात्र जीवन-अरन और बुल-धीरही क है मोया रना उनके बीच नहीं लीको जा सकती। काव्यशास्त्रके कथन और एपुर्बत तथा उन्नी अंग्रेज कृष्टियोंके मूल पौराणिक कथानकाके बीचमें जो दूरी है वह ऐसी हो

बाटी है कि उनका अन्न और उनकी हस्तुमती उनका संकर और उनकी पार्वती उनकी सङ्कलता उनका दुष्प्राप्त मानो अपने इतिहास और पुष्प स्वर्णके ओकसे उत्तर-उत्तरकर बाणीके उद्य बरह-पुनके कबनमें समा-से गये हैं । महानारत और रामायणके उनके रूप और काकियासक द्वारा दिखाये गये इनके रूपमें इन हो रूपमें जन-जीवन काकियासक दिखाये दुर्योधन ही अधिक आसक्त होता है । प्रसादकी भी बाणीकी कहन और उनके बचन-सुर्वाकी दूरीके मूलजनको जीय स्वीकार करनेके लिए तैयार नहीं है । उन कथानकोके विषयम मूल दृष्टीमें क्या कहा गया है, इसकी अपेक्षा जोन इसी बातपर अधिक आनन्वित होते हैं कि प्रसाद उसे किस प्रकार कहते हैं । ऐसे समय जोन सुनना चाहें या न सुनना चाहें तो भी यह कहना अत्यन्त आवश्यक प्रतीत होता है कि प्रसादको समझनेके लिए समझक बढ़ावकी सीढ़ियाँ सुरक्षित रहें ।

अतः यह आवश्यक है कि हम प्राचीन रस-सिद्ध कवियोंको तरह प्रसाद के कवित्वको पीढ़ियोंमें अव्यक्त समझे जानके लिए व्याकरण व्याख्या और कोष-निर्माण-द्वारा उचित लोचनवा करते आये जिससे नकार कमजोर और जन-साधारणकी श्रेणियोंमें जब लोकसज्जन प्रसादके कवनपर आसक्त हो तब वह हमारी या कमानकी बात मानकर न रह जाये वह प्रसादकी रचनाके कव-कव और सज्जनका समझ लके ।

प्रसादसे मेरे परिचयकी बात यदि आपसे कहूँ तो सम्भव आप हैंसेने । सन् १९११ में जबकासे 'प्रभा नामकी एक मासिक पत्रिका प्रकाशित होती थी उसमें आलोचनाके लिए प्रसादका एक छोटा-सा कहानी-मसूदा आया । उस पुस्तिकाकी एक कहानीका नाम था महान-महात्मिनी और एक कहानीका नाम छामा भी था । उन दिनों मौलिक कहानियाँ लिखनेका युग हिन्दीमें बह नहीं पकड़ पाया था । हमारे अल्प पढ़ीसो प्रवेशोंकी मायाजालमें भी अवरत बाह्य कहानियोंसे अनुबाध हुआ करते थे । प्रभा'के सम्पादकीय कार्य-लय-से मेने प्रसादकीको पत्र लिखा था कि कहानियाँ बहुत अच्छी हैं मैं

पुस्तकको दो बार पढ़ गया। कृपया लिखिए कि ये कहानियाँ कहीं अनुवाद तो नहीं की गयीं? इन्गु के सम्पादक 'नुपतजी' का पत्र आया कि ये कहा-  
नियाँ मौलिक ही हैं। किन्तु प्रकाशकी याददास्त देविए कि जब इन बटना-  
के १९ वर्ष बाद सन् १९३२ में यात्रिनिर्देशनसे छीटते हुए मैं उनसे पहुँचे-  
पहुँच मिला। तब उन्होंने हँसकर कहा जब ता आपको विरहात है कि मेरी  
कहानियाँ अनुवाद नहीं होती। इसके परचातु हम दोनों हँसने लगे और बहुत  
सी ऐसी बातें करत रहे जिसका करना उन समय आवश्यक था।

सन् १९१३-१४ में प्रकाशकी एक कविता इन्गु में छपी थी। उसका  
पीपक यदि मैं भूलता नहीं हूँ तो इन्द्रबनुष था। उससे विरक्त पिछारों  
की देखकर मुझे लगा कि एक दुष्ट इन्द्रमका घनी हिन्दीमें आ रहा है।  
अपनी इन प्रसन्नताको मैंने छेड़-छाड़ हो के द्वारा व्यक्त किया। मैंने इस  
नामक कविताकी चुनौती नहीं पीछीकी स्वीकार करनी चाहिए और निष्ठक  
तथा रकाबटोके परे अपनी बात कहनी चाहिए। बहुत समयके परचातु इस  
पत्रका यह उत्तर आया था कि समय-समयपर मैं अपने विचार इसी तरह  
व्यक्त करता रहूँ। किन्तु जीवनपर प्रतिज्ञाका बड़ा पहरा रहनेके कारण मैं  
मैं काप्रकाशकी सीमाककर रहा सक्ता था। मैं विचारके पाठ स्वल्पतातुबक  
आ-आ सकता था और मैं ही पत्र-व्यवहार जारी रखकर अपने विचारों  
तिरपर संरक्षित औरते रूप करता था।

जिन समय प्रकाश मिलने लगे उस समय हिन्दी-जगतुब का तान था  
गाएँ पटी। एक यह कि स्वर्गीय पूज्य पण्डित महावीरप्रसादजी द्विवेदी और  
उनके द्वारा सम्पादित सरस्वती मासिक पत्रिका-प्रयत्नोंमें बहिष्तावा इत्र  
आपाते लड़ी बोलीमें लिखा जाना प्रारम्भ हुआ था। इस समय इन विषय  
पर जनचार बर्बात हो रही थी कि बहिष्तावा इत्रमापासि निनी जाये अथवा  
नहीं बोलीमें। प्रतिज्ञाके बनी स्वर्गीय नायूरामजी 'चंकर' यहाँ और हिन्दीके  
तीव्रतरी नीरव रूप देखीप्रसादजी पूर्ण इत्र-जात्राय बहिष्ता दिगने हुए

सड़ी बोलीमें कविता लिखनेके लिए समुच्च हुए थे किन्तु राष्ट्रकवि भी मैथिलीशरण मुन्शी को कविताएँ 'सरस्वती में प्रकाशित होती थीं व समस्त सड़ी बोलीमें लिखी जाती थी। इसी प्रकार स्वर्गीय पण्डित कामताप्रसादजी बुढ़ 'सरस्वती में और प्रभा में भी सड़ी बोलीमें कविता लिखते थे। उस समयके बिड़ोही तरुणों तरह थी अपघातक प्रसारजीने अपने कठिन मार्गके लिए सड़ी बोलीके इसी माध्यमको अपनाया। दूसरी बात यह हुई कि भारतकी स्वाधीनताके लिए होनवाले प्रयत्नाम हिन्दो-साहित्य कुटुआ जा रहा था। इन प्रयत्नोंका बीमबेरा काशीसे ही क्यों पड़के स्वर्गीय भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र प्रारम्भ कर चुके थे। अतः भारतीय जीवनको उत्तम बनाने नामे मुबारौकी ओर साहित्यका ध्यान गया जो कि स्वाभाविक था।

बिम तरह मकत-कवियों और रीति-काठीन कवियोंकी कवितामें एक संक्षेप स्पष्ट दृष्टिकोण होता है उसी तरह भारतम्बु व द्विबलो-मुबीन मुबार वाली कवियों और नये छायावादी कवियोंमें भी एक संक्षेप उत्पन्न हुआ। मरी समझमें नहीं आता कि उस समय काम्यका माधुर्य मुबारकी मकपसे अपन साहित्यको बचानेके लिए अपना कविताम अमर माधुर्यको सुरक्षित रखनेके लिए यदि समाजमें संक्षेप उपस्थित नहीं करना चाहता था तो छायावादका क्या न लेता तो क्या करता। उपेक्षा बकाबत अपमान और बदनामीका बढ़-स-बढ़ा मस्य चुकाकर भी माधुर्यको रखा करना और इस तरह प्रकारान्तरसे अपनी एकता या सही बाराके अनुसार कबाकब भर हुए अनन्तक माधुर्यकी एककसे अन्तरात्म और अपनी पक्षियोंका निहार कर के जानेके लिए धूपकर बात कह से जानेके बिना और बाध ही क्या? अतः उस समयका अन्तिमवाप यदि भारतीय पद्यधीनताके प्रति बिड़ोह था और बुढ़-कपकर बिन्दनी किताना जगकी लाचारी थी तो मुबारबाद और पद्या रमकताके अधिक उपदेराग्रह ठेके ठठकर बालनेके दिनोम जाया और कवनकी मस-बिदा सीखनेको अपेक्षा भावोंकी अपधीरबरीक बाँधनेमें बाँसुओं और अनुभूतियोंके पंथ लगाकर आनन्द और माधुर्यको न छूटन देनेके लिए नवव्य

बहुसाकर भी बिरोह करणक लिए मुपके भाबुर्यकी लबोयल मयस-मयस पठ्ठी थी । इस तरहकी रचनाओंको सबसे पहले स्वर्णव की मनेसदकर विद्यार्थिने प्रकाश'में प्रकाशित किया । यद्यपि सर्वसाधारणमें इस बापके फैमने को उन्हें अधिक आसान न थी । उन्होंने मुससे कहा भी था कि ऐसी पंक्तिओंकी लिखकर आप बकेसे पढ़ जायेंगे । मुस यह मानून नहीं था कि इस दिशामें भी अपसदकर प्रसार कुछ स्थित रहे हैं । बहुत कुछ कर रहे हैं । मुने उनकी रचनाओंकी ओर समुत्त होमेका बहुत बिलम्बके अवसर मिला । आपके सुप्रसिद्ध समीक्षक डॉ. विनयमोहन दासो उन दिनों काशी विश्वविद्यालयम पढ़ते थे । यह कोई सन् १९२७-२८ की बात है । वे जब काशीसे लौटते थे । अपसदकर प्रसारको रचनाआके मुख ही प्रभावित होकर लौटते । एक बार प्रसारकी भी मैंने मासक पुस्तिका के आये । मुने अपना मानो अपाठनाके परपरमें सोस आ गयी । मेरा हृदय खिल उठा और माधारक काव्यके उस सबल अपसर मेरा मन आक-आण हा उठ । छ-छूकर आज भी मुस उन बातका विचार हुए बिना नहीं रहता ।

एन्ग्लीसोमिस्ट ( आलबाराटर-आरुन शास्त्रा ) कहते हैं कि उनदाई मैना आंगोंकी पलकड़ा डिलना-डुलना छरीरका सिङ्गुङ्गा और पैम्मा मनुष्य या प्राणी मासकी ये आसते जबबा ऐसी हो जियाई अपने-आप हंठी है इनके लिए आयाज नहीं करना पड़ता । संगीतसे रास-रामिनिपाके छतार-बहावक रियाजसे क्यों लग जाती है । बिब नृत्य और मृगि भी इस धमके छापी नहीं । क्योंके अभ्यास अनुपुति और अप्ययमके मास बलते हैं । तब क्या काव्यकी मूर्ति ही उतनी लड़ीभूता है जो एन्ग्लीसो-मिस्टकी बतायी जियाओंकी तज्ज अपने-आप होम नहीं है ? जिन लमब प्रसारके अमुक्त काव्य मासोंकी पड़ता हैं वो लमबा है बर जीवनको निर्मात्र विचारन नहीं है । साधनाका एक बरिचार है जो प्रसारकी रचनाआके पीछे छड़ा है । और तब प्रसारके इन बचनोंमें जहाँ रग दिशावी देता बड़ा तिम-तिलकर प्रसारका इन रनके लिए मिट जाता भी टौन बड़ता है । इन

अब ईश्वर प्रसाद

पवित्रियों का देखिए,

बयों अमृत अमृत गंगा-सी  
छिटका कर दोनों धारे  
चेतना तरंगित मेरी  
लेती है मृदुल हिलोरे ।

अब बा

धीरे में मृत्यु बसा है  
जैसे बिजली हो धन में ।

अब बा

विष-प्याली को पी ली थी  
बह मदिरा बनी हृदय में ।

अब

काली अँसों में छितानी  
बोधन के मद की लाली  
माष्पिक मदिरा से भर दी  
किमने नीलम की प्याली ।

अब नवों

तिर रही अतृप्ति-बलधि में  
नीलम की नाभ निराली  
काला पानी बेसा-सी  
हे अँजन रेखा काली ।

अब बा इसे पकिए,

तुम स्पर्श-हीन अनुभव-सी  
मन्दम-तमाल के तल से  
जग का दो श्याम लता-सी  
तगद्गा-मल्लव बिहल स ।

सपनों की सामजुही सब  
बिलरे, यह बम कर तारा  
सित-सरसिख से मर जाये  
यह स्वर्गगा की धारा ।

और

बाँधा था विषु को किसने  
इन काली शंखीरों से  
मणिवाले फूलियों का मुल  
क्या मरा हुआ हीरो स ।

इस तरह जब भी प्रस्थाने छिटा वे कच्चीपर डी नहीं जाये वह समय वे मौनार्थ आगन्ध और समयवकी मस्तीमें भरें हुए सम्पूर्ण कच्ची पर भी जाये ।

ये यह मानता है कि कवि जयवा कलाकार व्यक्तियोंको उठाकर पैर देता है बटनामोंके जाये मुरता नहीं । वह केवल विचारोंके जवरीस्वरके सम्पूर्ण व्यक्तिके बीच और बटनामोंकी जवातताकी लेकर उपस्थित होता है इसलिए उनका जीवन अपनी कला-द्वारा व्यक्त विचारों और बटनामोंकी उसके द्वारा की हुई चीकनपर निजर उठता है । जब कलाकार के कहनेके प्रचार और उसके आकारमें दूरी हुई जा सकती है तब उनके गण और पदम ता दूरी हुई हो जा सकती है । कविताके समय प्रचार एसे सम्यक् है माना कोई बीबाना कासीके बसावरमेव पाटपर बैठकर सारी काम्य-बवाका अपने मनोके द्वारा अपने जीवनपर पचार लेना चाहता है और जगतरकी मिटाम भोतकर उस अति भीदी कर देना चाहता है किन्तु जब हम प्रचारका बच बड़ते हैं तब ऐसा लज्जा है मावो देण-सेवाके लिए आवश्यक व्यापक विधिक अपनी रचनाओंका नियन्त्रण कर रहा है । लज्जा है प्रतिभाकी गाड़ीको मचने पचकी और पुमानेके समय बन्धनर बुझ करनकी शीमल तकतर प्रचार परित्यक्ति और वाच्यके शब्द समान

इनसाऊ करनेमें यत्न-यौत्न होते थे। इस बाहुसे कीन हृषित न होगा कि प्रसादक कथनमें-से सत्यके धार-धार साँजते हुए अबतक आप भले से लें किन्तु उपदेश कहीं छूँते नहीं गिरता। सगता है कविता प्रसादकी बटि है उनका गद्य उनकी मृति। कविता प्रसादका प्यार है उनका गद्य समता नतम्ब। जो जानकारो कलाकार संगृहीत करता है उसे जन-जीवनक प्रति सावधान रहनेकी मनीषितिका इतना पता है कि जानकारियोंके भीमत्स काँटे अपनी अनुभूतिके अँधोंको न गड़ने देनेके लिए अथवा गद्य उठनपर अपने मुँहमें आह न निकलने देनेके लिए बेव-नुर्म-महिष्णुता भी उसके पास है। आ-कलाकार घटनाओंको तोड़ते-मरोड़ते हैं वे जन घटनाओंके आनकार वहसे होते हैं तब तोड़ते-मरोड़ते हैं। आनकार अपनी क्रममें अपने पुगकी रत्ता करता है। भागो उस समय वह एक तन्त्रका कार्य करता है किन्तु अपनी कबलाके अणाम भी कलाकार आनन्दको जगम देनेकी धमता रखता है।

प्रसादका पाठे समय बाह्य लोगोंको कोई पता न चला हो किन्तु प्रसादको जोड़े समय उन्हें ऐसा लगा मानो पूर्णके माधुर्य-देशके विद्यास महमका एक बलवान् स्वप्न टूट गया। बाँधेमें छड़े होकर नहीं बाँधेमें पर हाकर पाठक आन पाता है कि प्रसादका माधुर्य पराजित और असफल नहीं किन्तु अपने आगेगी स्वरूप पीढ़ीको काव्यके क्षेत्रमें जपा देनेमें सक्षम हुआ है। जिसे नहीं देखना या उसे उगुँनि करानासे भी नहीं देखना चाहता। आनन्दको अर्थकर कहोमि भी दाब मात्रके लिए उगुँन दूर नहीं करना चाहता। प्रसादकी रचनाएँ बचनका काव्य नहीं हैं व काव्यका साधनिक विरलेपन है।

मुच पाम रह कि मुच गुर रहै व अभाओंकी पूर्ति करनेको बजाम भाओंकी पनि करनेमें अधिक तत्सीन रह। अभाओंकी पूर्ति भी अरन-आप ही जाती ता हो जाती।

नया मुच प्रभाद के पास आया तथा अमर भी ब्रुवा और एक



ज्योतिसे बलनेवायी दुगरी ज्योतिही तरह प्रतिपाद साधकी विविधतामें  
 मुपके बाबेयों और प्रबेनोंकी बीपावलीका लोहार मनाया किन्तु यह सब  
 कुछ हुआ संस्कृतिही भाषाम अपनिपत्तोंकी बाजीमें । भावोंकी वर्तमानता  
 ही से नहीं भावी तर्क से समनेवाले प्रसाद व्यवहारके भूतकालपर इतने  
 क्रिया से कि जो कुछ जगहोंलि लिखा वह बरपन्त ठाका हाते हुए भी पुराण-  
 पुस्तकी तरह पवित्र है । भूत नयी राज्य-विद्यास नये प्रकटीकरणका  
 तौर-तरीका नया पहुँच नयी किन्तु सौतेली तरह विरवास पुराना ।  
 बाजोंके बाले हुए युग प्रसादक विरवासकी वस्तु न है । वे बुजोंकी  
 बाजी हुई बाजोंको सँभारनवाले से ।

## सुमित्रानन्दन पन्त

बहु ठी पत्नी है उसकी तानमें एक नैनबिन्दु बिछाव है। उपाकी आँखों-मरो आँखों धरयेक प्राण गाया है। पर जब उसने गाया था तब सग्याकी लललन-नटी छाया थी। कसका हृदय छाया मरी उललनसे निकलकर फिर प्रकाशके कपाकोटमें भाव उठा है।

उसकी पड़ोसी तानमें लललन-नटी बुसरीमें बसि और तीसरीमें बैबरीकी बलि थी। आज बहु गिरायाके बल्लेपनके बीजे चिरानन्दके ललनबनमें ललन-ललनपर लुलु-लुलुकाया था रखा है। लुलु और लुलु दोनोंको अस्तिरताकी बहु आल लुलु है। कसका लुलु चिरानन्दकी तान है।

उसके बानमें पर्वतका बीमल गिराका दीवार और बनकी मल्ली है। बहु बिजल बनका राजकुमार स्वर और लीलाके हृदय-हृदयमें राज कर रहा है। उसमें मधु है सदाश नहीं आकर्षक है, लीला नहीं बिजला बंग-बंग लंकार है बिजला रोम-रोम कम्पन है, जो कपका स्वर और स्वरका रूप है।

## सुभद्राकुमारी चौहान

सुभद्राकुमारी का अभाव प्रकृति के पृष्ठपर एसा छपता है मानो गर्मशाको धाराका कोई नष्टाकीसकके अँधरासे-अ चुपकर ले गया हो और हम निमल धाराके बिना उसके पुष्प लीखोंके सारे मात मानो अपना अब और सम्मोह को खँटे हों। लकड़ा है बीन खरी कलकी ही बात है गोमती सुभद्राकुमारी चौहान हमसे हँस रही थीं खेक रही थीं निच रही थीं शोक रही थीं कि अचानक बाककी बटोर खिड़ाके बिज्जकी पकरीसी टेकहियाकी बहु नर्तकी मायिका आँसुको रागको तलवारकी तरह प्राक्तके राजनीतिक एवं साहित्यिक सिद्धिपर लक्ष्मण आया बिछेरकर मान जोवनको बिर-अचिनी नमशाही ओकस्विनी धाराको प्रति स्मृतियोंकी पावन अलराशिमें लीन हो गयी।

अनियन्ता अरु तरब एक बार अवाचारकीद्विज बोहिदा और महीराकी पुकारसे निचकर यशोदाके जीवनमें मिट्टीका स्वाद लेने आया और मुरली बोलियाको अरु-रु प्रदान कर गया। बीबी बैदियोंकी शंका, संशानोंकी बिचयता समाजक निष्ठर अग्रभामें छुड़र अग्नेबाले असह्यम अवेसितोरी आहें सुभद्राकी संघर्षमें लीन लार्थों और बनरी यशस्विनी राविनी मध्य-प्राप्त व श्रुती-नगरके पर-आवनमें पूजा बारर और प्यारकी बस्तु बन गयी। समाजके अङ्गुनों व उदेतिशोंको काभा अलीहनाकी अस्थिर जिये पूजे जायबाले पापार्थले कमीनवेनी निरुधन मनुहार कर रही थी कि उनकी सहायताके लिए सुभद्राकी प्रवर्धने निरुधन प्राक्थमें गयी यह नियम समाजका अन्ध और अविद अब नष्ट न बर्धनी।

नागद-सबकी अहङ्क अग्रमें करने सारे आनूपोंको यगारर

भारतीय स्वतन्त्रताके सपनेबाहुक बापूजी असहयोग काजमें दे देना सुमद्राजीके लिए बितना झड़क था प्रांतीय सरकारकी अकड़ भरी धुनीजी को पानो-पानो कर देनेके लिए नागपुरके सज्जा-सत्याग्रह कायबारकी प्रतिमाइयोंको जोवनका मामूपाय बना केना भी उनके लिए घटना ही बाधा न था ।

सर्वप सुमद्राजीके लिए जीवनके सजोब गहलूका नाम था । निर्दुःखतासे एक बार सर्वपमें उतर पड़नेके बाद वे एकके पक्कात दूसरी मफ़्फ़ताकी ओर बढ़ती गयी । यति-गणके फूल और सुल उस अनासक्त प्रतिमाके हाथों-हाथों बिसरते गये । आजादीकी कड़ाई बोरसे बोर होती गयी किन्तु सुमद्राजीको किसीने पीछेकी कुशरमें बंध देखा ? सन् १९४४ का कठोर आन्ध्रालन सुमद्राजी बेचम । फिर १९४२ की बहु आखिरी कसम-कस बिसपर झड़ू पानेके लिए भारतकी बिहारी जनता भीषण बरपाचारों और संहार-शक्तियोंकी शिकार बनाया जा रही थी पड़कते हुए आगके घोंकोंमें बिहंसती जीवनसे निर्गुण साँधीकी रानी 'बीरोंका बीसा हूँ वसन्त'के स्वराँसे छाक जीवनको चिर झड़ूत करनेवाली यह बोर बस्ता छोड़के सीखघाँमें झेंद की ओर अपनी कृतिपासे आजादीके बलि-वन्धियोंकर रच-रच आलोक्ति और प्रतिपाद कर रही थी ।

बसम इस अग्निबाछाके हाथों पड़ी यह तुल-सलाका कमी निस्साइमें प्राण भरती कमी मुक और बिषय जनताके भाग्यपर पड़न वाले पत्थरोंपर बस बनकर टूटती कमी झाँसीवाली राजाका पाया पाकर घबामें शक्ति संचार करती और जब वह सचचा खपन अगोंमें होती तो कितरे स्वर्णकणोंको सयेटकर जानबाखी पीढ़ीके आलको सुनहरा बना देने की ठेपारीमें व्यस्त रहती । यह गीत नहीं जीवन-संघात किलती चमकी पावोंपर बसमाके कठार जाती नहीं अनुभूतिके 'यम क्वा'से बीसे मुकुट बिहरे होते । उन मिथियाकी आमा सेकसरियाके चारीके टुकड़ों-पर नहीं माँ कहकर मचल पड़नवाले कुमार-हृदयाक ममता घर आह्वानों-

पर प्रतिबिम्बित होती।

जबसाब बकन बीर बिपाब बीनती मुमशाकुमारीजी बीहानके बीबनसे सवा मपरिचित रहे। कठोरतम परीछाने बी इन्हें मुतकराते ही देखा।

“मैने हँसना सीला है, मै नहीं जानती रामा  
मुझने मुतरित हाता है मधुवन का कोमा कोमा।”

बीर

“मै बिमर निकल जाता हूँ  
मधुमास उतर जाता है।”

मुमशाबीकी ये वक्तियाँ उनके छन्द रहिन बीबनकी सुन्दर व्याख्या है। आज उनके जबसाबके वरचाव उनके वसनसे बरत घोम्म-सा मुत बायी क्यों न लगे। अब तो मानो मुमशाबीकी ये वक्तियाँ भी सब होने को थीं।

“आभा प्रिय शूरुराज,  
किन्तु धीरे से आना।  
यह है शाकस्थान  
यहाँ मत शोर मचाना।

हम स्नेहमयी मातृप्रतिभाकी यादगारमें अपनी भडा बीर बलिदे  
साब पुनोत स्मृति का जमिनभरकी ये वक्तियाँ भी  
“आभा आज बिदा देते हैं,  
हम गीली जंगलि देकर।”

## पुरातत्त्व-ज्ञानका सूर्य

कुछ महीने पहले समाचारपत्रों में खड़ा था कि डॉक्टर काशी प्रसाद आनसवाल बीमार हैं। उसके बोझों पर फलाने कि बाबा उहल सांझयावन अपनी बीम-बाबा स्थिति कर लौट जावे हैं आनसवालकी बीमारी बेहतर हो रही है। यह खबर पढ़ते समय किसीने सोचा था कि उसके बाब बाबा केर और और आनसवाल बाबने जोर स्पष्ट करमकी बुनियादें छठकर केवल यावहार जमानेकी बुनियादें बने बाबें। इन बाब का समझी बीमारीपर बिना प्रकट करते रहे कक इतकिए लड़ते मर जायें कि बहुतक बहु विभूति हरी और मंसके बाबेंमें मर रही लड़क एक बार फिर उसके बर्तनसे अपनेकी कुत्तार्य न कर पाय। परन्तु समय यदि बहकर, अताकर और हमारे लंस बाबेपर ही आनकी आनसवाल तो छोड यानकी बात ही कहीं थी ?

समझी निम्नरुता इससे अधिक बरा ही लकती है कि भारतके अति कांछ प्राप्तिमें नये सासन-विधानके अनुसार कांछेस राज्य स्थापित होनेकी लियारिके साथ होनेवाली लकबलोंकी बहुत-बहुत बिहार अभी समझ भी न पाया था कि अपने कीर्तिमय बीमनके साथ-साथ सवेतकर भारतके सज्जहोंमें ईदों परबों और नागा-प्रकारकी आकृति-प्रकृति रकनबासे सकेतोंमें सिमितकर लोपी हुई आनमर्तकी पौरव-परियाको छोड-छोडकर बयाने और बसे हमारे वर्तमानके साथ समरस कर देनेके एकान्त-बनी डॉक्टर आनसवाल अपने बीमनकी बाबर समेत बने। लुगा है, बिहारमें ऐसे लड़कोंकी लंका कुछ अधिक है जो आनसवालकी सगावन हिन्दू नावना-का कुमस्वान मानते हैं किन्तु यदि बाब कोई आनसवालके पुनरावसनके लालचपर लगे हैं इन 'कुर्बकार' को मस्तक शुद्धनेको कहे तो समझ है,

इतने बड़े प्रभोमनकी व्यवस्था न कर सके। काय यह सम्भव होता।  
 वायसवासीका अथवा वेबल छप्पन बपकी उसमें ही गया।  
 जीवनके आदि-नर्बसे लगाकर स्वर्गारोहण तक इस धर्म पुरातत्ववताका  
 अतिथीयताके साथ कुछ-एना सम्बन्ध रहा कि दोनाय-से विनीने किसी  
 का साथ न छोड़ा। व पैदा हुए ऐसे बापके घर आ जिला मिरजापुरमें  
 बाहु महादेवप्रसादके नामसे मछलूर और त्यागके सबसे बड़े राजमारी।  
 वास्तविक मिरजापुरमें ही होता। हाई स्कूलकी सीटियाँ समाप्त हुई  
 ही लगन भेज दिये गए। बड़ी एम ए हुए। बानी भाषामें विद्वत्पत्रता  
 प्राप्त की। मन् १९७८ में बैरिटर डाकर भारत लोके। बल्कला  
 विरचविद्यालयमें भारतीय इतिहासक (प्राचीन इतिहास उनका विषय  
 था।) प्रोफेसर नियुक्त हुए परन्तु एक बपन अधिक नहीं न टिक सके।  
 पटना लोके और यही जग वसे। आर्यावर्तकी वैजयन्तीकी दिवाबाद भार  
 छोर तक कमानवाले समय-जरेछोटी कोला भूमि विदेशी आक्रमण  
 कारियाके अहुर करममें पदु राजकुमारोंसे प्रत्यक्षपरिण बाहुबाकी रव-  
 ह्यली और मातपर राजन करमबाक रवेनारीके धीमनिबानी पूव  
 पुस्पाके विजेता बन्धुपुनकी यह प्रज्ञानमरी डीबटर आयमबाका न छोड  
 सकी। विज्ञाके कच-कचमें बिगरे हुए आयवीराक इतिहासका प्रवाचन  
 कानेवाला यह अतिनीय मनीषी आज बाहुषी प्रतापिन वसी पवित्र भूमि-  
 पर स्वयं इतिहास बनकर अमर न गया।  
 भारतकी साम्य आयमबाक पुनकी बरोहर बनकर आय वे। व  
 निर्माता वे। हिन्दुबाके प्राचीन इतिहासके नाममें आ बहा-नर्बड भार  
 तीय विद्यापियोंके गायमें पैल रहा था आयमबाकज्ञान उसकी एक आयम  
 मण्डरि मुक्त की। बरने ता मायके निज्ञानोंको कश आनाबनाएँ हुँ  
 हिन्दु पैलम आयमबाककी गाथ रहा। उनके निरिबन्ध मोका स्वीकार  
 कर मुयके विज्ञानोंको ज्ञान मत और विचारोंके मन बरचन पद।  
 मन् १५ से लबाकर मन् १५ तकके दो-नो वन आनीय इतिहास

क 'तिमिर काक' के नामसे प्रसिद्ध हैं। सन् १९६६में प्रकाशित अपनी एक पुस्तकमें आयसबाबजीन इस तिमिर काकपर कथमन्त्र प्रकाश डाला। इसके पश्चात् भारतीय इतिहासपर सम्भवतः जीवन-काकमें उनकी अश्विन पुस्तक 'इन्डोरियम हिम्मे बाक इन्गिया' के नामसे प्रकाशित हुई।

आयसबाबजीने जो कुछ किन्ना बहु सीमाकी प्रामाणिकताके साथ किया। उनकी केवलम मन्त्रद्वाराकी-सी सूक्ष्मता चन्द्रम विचारको ठेस-कर बना देनेवाली प्रेरणा और विचारोंमें स्वयं रंगकी चहलाई मौजूद थी। आयसबाब अब लिखने बैठते या मानो उनकी उर्वस्वियाँ अतोतके मुखाके साथ बरमान और मविध्यके ताने-बाने ओड़नेम व्यस्त हो जातीं किन्तु उनका प्रामाणिक और समाकोषक मस्तिष्क तबतक किसी भी विचारको सूक्ष्म रूपम कामचपर उतर जाने और वर्तमान तथा जादी पीड़ोका पावन परोहर बन जाने रैनको तैयार न होता। जबतक उनकी पैनी जन्मदृष्टि उसमें अतोत-स्वप्नकी भाँति अटल और-बमकी तरह विस्तृत और सत्य के समान विरमन निधि न देख लेता। लौकिक क्रिया-मायाके बन्धनोंसे पर होत हुए भी आयसबाब अपनी कृतियाँके रूपमें ह्मर बोध उपस्थित हैं—अमर हैं।



## ठाकुर लक्ष्मणसिंह चौहान

बीरबली ठाकुर लक्ष्मणसिंहजी चौहान जब इस संसारमें नहीं रहे। धनका काम खण्डवामें शिखर आमरा और प्रयागमें जीवन-यापन और देहावसान जयसपुरमें हुआ। सन् १८९४में काम लेकर ठाकुर लक्ष्मण सिंहन विविध क्षेत्रोंमें इतना और ऐसी अनुपम देव-तवा की कि यदि वे धन परिचालित युव और गुणधर देवमें पैदा न हुए होते तो देश भरत अन्ति बासी, समाज-सेवक काँचेसी सम्बन्धकार गायककार, कवि और निपुण रिस्तोस बलानवाले तथा अन्तर्में सत्याग्रहीके नाते उनकी कौटि देव-स्वात्न हुई होती। देव और समाजकी विरोधिनी पक्षियोंमें लोड़ा सेना और सन्त-सङ्गत काम आ जाना इस प्राणके दो ठाकुरोंके स्वभावका बड़ी बाना रहा—ठाकुर लक्ष्मणसिंह और निरंजनसिंह। इन दोनों नाम हममिए हैं। एहो हैं कि शान्तिवादी-बसमें इन प्राणके कैदत इन्हीं दो ठाकुरोंमें अपनी देवाएँ लवायी थीं।

जब ठाकुर लक्ष्मणसिंह खण्डवाके झाई स्कूलमें पढ़ते थे तबमें वे केवल हममिए अपनी पारिवारिक कठिनाइयोंकी बात किसीसे न कहते थे कि वे विरस्कारके सङ्कलन स्वयंका क्याको किसीकी बरसतवाली बजावा सह नहीं सकते थे। सन् १९११ में एक दिन प्रातःकाळ लक्ष्मणसिंह मेरे घर जाये और मेरो बलीते बोले 'जीजी यह तो विरोधीदान प्रभाव बाँट रहा हूँ—'। मैंने बीचमें ही टोककर पूछा 'काहेका प्रभाव है रे क्यों बते संत करता है?' कह बोले 'जी विरोधीदानेका प्रभाव है। आज मैनिचा बरीशादन आ गया है और मैं केन हो गया हूँ।' मैंन बिड़कर कहा 'माय यहनि यह अपनी अनुकृपाका प्रभाव आज बाँट रही है। त्योटी बड़ाकर बेबुँछके नष्टे-नुष्टे लक्ष्मणने कहा 'जी हाँ यह अनुकृपा सब

फिरसे मेरे घर नहीं आ सकेगी इसकी जिन्दगीमें एक बार घर आये हुए मेहमानके आयमनकी खुशी मना रहा हूँ। और सचमुच जीवनमें उसके बाद सत्यमर्षिह कभी परीक्षामें फेल न हुए यद्यपि उनका शिक्षण मजकूर बाख़िषमे हुआ।

सत्यमर्षि कविता लिखा करते थे। बहुत अच्छी लिखते थे। मैं उन दिनों कण्ठबासे 'प्रभा' नामक मासिक पत्रिका बकाया करता था। सत्यमर्षि जब कविता लिखते निर्बोक्ताकी भाषा सर्वेश्वरी कानूनके बन्वनाको लांछ जाता करता। रचनाएँ राजशेही हो जाती। मैं उसकी पंक्तिबोम कुछ थोड़ा परिवर्तन करके 'प्रभा' में छाप देता। उन दिनों सत्यमर्षि आगरा कलेजमें पढ़ते थे। यह सन् १९१३-१४ की बात है। मैं बुन्द्यावनक पुस्तकालयमें जाता हुए, सत्यमर्षिहके पास 'बीहि'में छड़ा। मैंने उसके पास 'प्रभा'का वह अंक देखा जिसमें आस-पासकी सब छपाई सुरक्षित छोड़कर सत्यमर्षि नामकी कविता पुरे-की-पुरी काटकर फेंक दी गयी थी। गुस्ताका बोझोका मैं मैं सत्यमर्षिहके पढ़ाया था। कुछ रयीते बढ़ा कर मैंने 'प्रभा' के पुस्तकालय-से कविता काट फेंकनेका ठाकुर सत्यमर्षिहसे कारण पूछा। सत्यमर्षिहकी आँखोंमें आँसू आ गये। बोले 'बारा मुझे पुरस्कार दीजिए। कविता छापनेमें राजशेही होता है उसे काटकर फेंक देनेमें तो नहीं होता?' मैं जबसे घर गया और बैठकर अपने गले के उमरने-से उनके आँसू पोंछ दिये और फिर बिग अपने आँसू भी पोंछ दिये।

आगरा कलेजमें पढ़ते हुए ठाकुर सत्यमर्षिहने 'बुल्लो प्रभा' नामक एक नाटक लिखा। कर्मियोंकी छुट्टीबामें जब सत्यमर्षिह कण्ठबा आय तब वह नाटक मुझे देकर गये। मेरी पत्नीन ससँ सहैयकर रम किया। देव शारके परिषदकी एक छोटी-सी पेट्री ही मेरी लिखी हुई तुकी-बेनुकी चीजों-का छोटा-सा अंशना था। उसपर पीन आनेका तात्ता लगा था और उसकी बाबी मेरी बनेक्रमें बँधी रहती थी। जब मैं उन पेट्रीके पास बैठता तब मेरी पत्नी और माता दोनों मुझमें बहुत गाराज होती। मैं यदि बहुत

करता था। उसका सम्बन्ध था कि इस पेटीमें मैं कुछ ऐसी चीजें लिख बिछकर रखता हूँ जिसके कारण मुझ बार-बार पुलिस चौकी बुलाया जाता है। और इस तरह मैं अपने पिता, और परिवारके नामपर फसल लगाता हूँ। छरी कितायों और मछलियोंको तो माताजी बूझने जका दिया करती थी। कितनी कीमती कितायें व जका चुकी थीं अपन बेटेकी किसी बाइल-में यह जानसे बचानेके लिए।

लोकमान्य तिलक छन दिनी माण्डले जेसमें कात्तानाकी सजा काट रहे थे। काँवठ नरमरसके हावय थी। सन् १९१३ की बात है जब श्री सत्येन्द्रप्रसन्न मिह ( परचात् काड मिन्हा ) कविछके जय्यज थे। उसी समय हिन्दुस्तान रिपब्लिकन कन्वेंशन ( कान्ग्रेसियों )की सम्मेलन बैठक थी। मैं सम्मेलन गया था। मेरा गैरआधिकारिक हिन्दी जयन्त साहसके युव निर्माता भाई कलछाकर 'विद्यार्थी' खण्डवा आवे। चूँकि वे हमारे यहाँ पहुँचे वा बार का चुके थे। मेरी पत्नीज सनछर स्वाधन किया। गलछाजी और मेरी पत्नीकी सलाहसे मेरी पेटोका ताला दूटा और उसमेंका छानना सटा गया। गलछाजी जय काछजाव साव ठापुर लदमचमिहका नाटक कुका प्रका के थय। नाटकपर जेजकका नाम रामानुज लिया गया था। नाटक किनन ही जका लछ प्रतापम छगता रहा और 'प्रताप की सलके लिए दण्डस्वका एक बड़ी जमानतकी रकम भरना पड़ी। जब 'कमबोर' बबलपुरस निवसा लब उसके प्रथम मशायक सग्यारक ठापुर लदमचमिह थे। इस प्रान्तके नाम सन् १९२३ स सन् १९२३ तक तीन बारके 'कमबोर' की लितावटक जिन जमरकारकी याद रते हुए है यह बबरार ठापुर लदमचमिहकी लगनीका था। जब बराबोतासमें प्रथम पाँचन बनी और उनके परचाज् जब चुनाव होकर काँवठका मचाक्रम निर्माण हुआ ता उसके प्रथम मन्त्रियोंमें साधुराव केधव रामचन्द्र माण्डवर और ठापुर लदमचमिह चौदान थे।

स्वर्दीया मुभरापुमारीका लदमके भर वधू बनकर जाना लदमके

जीवनकी प्रधान बटना थी। सुमहाके लिए लक्ष्मणने अपनी कविताका समिधान कर दिया। जैसे भले से वे दिन। दोनों साहित्य सिकते दोनों भाषन करते। दोनों बेल जाते और राजनीतिक अवसरवादितके हाथों दोनों ही कुटिलतापूर्वक पीसे जाते। ऐसा लगता है मानो मरण इन दोनोंके जीवनसे हार गया। इस ग्रन्थमें ऐसा कोई आन्धोस्न नहीं हुआ जिसमें लक्ष्मणसिंह अपनी बलि देनेसे अधिक रहे हो। कैंसी मीठी है ये बहादुर विन्धगियाँ जो टूट यहीं पर झुकी नहीं। इन अनविनत संस्मरणों को लेकर इनका बोझ बोना-भर बाढ़ी रह गया है। ये संस्मरण इतने प्यारे हैं किन्तु इसने अधिक है कि ये कैसे इ-हू कालमोंकी सीमायें बंधीं ? यदि स्थानीयत्वके अनिच्छासे परे जीवनको देखनवालों धोपें लक्ष्मण और सुमहाके महान् जीवनकी ऐसी तो सुमहाकुमारी चौहान और लक्ष्मण सिंह चौहान जीवनके प्रतिभावाली और कष्ट-सहीसे मुमके ऐसे उल्लेख बधाहरण है जिन्हें पाकर सुम भाग्यवान् हुआ करते हैं।

जैसे ही जो लक्ष्मणका बिनोद आरचयजनक रहता था। एक बार एक लक्ष्मण रेकमें लक्ष्मणसिंहका ललक पड़े और उनकी तरफ अँगुली बठा-बठाकर धात्तियाँ देने लगे। लक्ष्मण धात्तिसे लक्ष्मणसिंह बोले 'महाशय अब मुझे विश्वास हो गया कि मैं आरनसे बना हुआ हूँ' शेष मिन यह बचन सुनते ही टट्टाका मारकर इस पड़े और धात्ती देनवाके महाशय बहसि बले गये।

धीमती सुमहाकुमारी चौहानको खाकर हिन्दी-बन्दू और कबलपुर तथा इस ग्रन्थमें बहुत बोया था। राजपुर लक्ष्मणसिंहका साकर पुरुषार्थके नाव हमने सुमहाकुमारीके संस्मरण-भण्डिरवा स्वर्णकण्ठ पो दिया। मुझे तो लक्ष्मण और सुमहा सभी भी ऐसे लगते हैं कि वे यहाँ नहीं हैं और जाने वे किस देनसे छतरकर बसे जायेंगे। बनेपनी जब लक्ष्मणपर बहुत प्रेम होते और लक्ष्मणके ध्याय और मूत्रपर निहाल हो-ही पठते तो कहते 'लक्ष्मण सुम बड़ दुष्ट ही। नन्हें-गन्हें बन्नोंकी बचनक साकर

जाते हुए लक्ष्मणको इसी मायमें बजाइया देनकी आज मरी तबीयत होती है। लक्ष्मण गय। मैं जानता हूँ उनके स्वाम तक भैरुस्मिमी नहीं पहुँचायी जा सकती। किन्तु यारे बराबर पहुँच रही हैं। मुझे भीतोमें एक बार लक्ष्मणको देख पालकी सलक बिजवा हो गयी किन्तु बम्ह भाँटोके बन्तीबहमें वह अपने समस्त वैभवके साथ निरन्तर घूम रहे हैं। पीढ़ी हम दिन कोई श्रम न चुका सकी जब लक्ष्मण और सुमता हमारे बीचमें थे किन्तु बिदा होकर आपदाओंका यह बिछाड़ो राजकुमार प्रभुता प्रविष्टा और पुण्यापकी आरोपर सुमता बीछ तो वह ही कि न पीढ़ियाँ हमारी ही पीढ़ियाँ हैं। आ लोग बिछाड़ी राजनीतिमें पड़े उनके स्वभावम कुछ ऐसा वैभुवापन था क्या कि वे मुकुट और मुकामे तथा समझौता करनेकी राजनीतिमें बतन ही भीचेपर न बतर मके जिनमे न चेवर उन पितामाजी सफलता निवास करती दिखायी जाती है तो जो साहस स्वाग और तरीब शिम्बो बिलावकी दरम्पराये लक्ष्मणसिंहने भैरुस्मिमीपर गिनी जान वाली म्मुमद्मारीमे अपने प्रतिपक्षके दो एक बहुत मुनहने बहाये हैं। एक बार लक्ष्मण और सुमता दोनोंके साथ साथ जाम्नालनमें पड़ आनेक दरवान् बिलासपुर जमये मैं एक मुकामकी लियो बी

एक पर एक सर मिटा किन्तु

रहे निज विमल टैक की याद

प्रछो के पम में पाते रहो,

जीवमापप के जी का स्वाद।

मुझे हो दोनों दानों ओर,

उग-म हिल मिल मुकने रहो,

उमड़न न दा ह्मय की भाग,

पम पर रहने रहा।

उठा दा ये चारो तर कंध,

समय की लो क्षिपुनी पर तान

और मैं करनेको बल पहुँ  
तुम्हारी मधुर मूर्ति का ध्यान ।

१८ सितम्बर सन् १९२१ को बिलासपुर जेलमें यह तुल्यवर्ती  
लिखी गयी थी जब कि सम्मर्षसिंह और सुमनप्रभुमारी दोनों माग्योत्रीके  
झण्डेके तले असहयोग आन्दोलनमें मरपूर जुटे हुए थे । मुझ नहीं मामूम  
था कि सितम्बरके इसी अमाने महीनेमें मुझे अपनेसे छत्रमें छाटे अपने  
साइले स्ट्रमनके लिए यह साराजसि भी लिखनी पड़ेगी । स्ट्रमनकी  
बादको मरे ये आँसू और बि अन्ध तबा बटे-बटियोंको मुझ बूढ़के समहास  
आधीर्षादि । मैं जानता हूँ मैं कहकर भी कुछ न कह पाया और कहनेको  
बहुत बाझी रह गया ।

अमर सहोद भगतसिंह

भयतमिहको जीवनही इच्छा नहीं थी । उन्होंने नाडी माँगते-से इनकार कर दिया । जीत रहनेको भी मैं दूसरोंके लिए ही तैयार हूँ । यद्यपि मैं इतना बूढ़िष्ठ कि उनकी मृत्युसे आश्चर्य न आकर कोई खूब न कर सकूँ । भयतसिद्ध अहिंसाके मुजारी न वे परम्पु हिंसाको भी बम नहीं मानते थे । साधारणतः ही खून करनेको तैयार थे । उनका अन्तिम वचन था— मैं तो बहुत समय रणधेनुमें पचका गया हूँ । मुझ काँधी नहीं हो जा सकती । मुझे या ता तापके भूँहपर छाड़कर उड़ा दो या बोली मार दो ।” इन भीषण मृत्यु भयको भी जीत लिया था । उनकी बीरताके लिए उन्हें हजार बार बनाई ।

—महारवा गान्धी

उपरोक्त आत्मा वह विनमारी भी विभले सारे देशी आत्मनिष्ठ कर दिया । वह भारतका सुल्तानी भी श्रुतस्वामी बन जाई नहीं देश सन्तान था । भारतक लिए उक्तका प्रेम बजाह था । भारतकी स्वार्थ मन्त्रक लिए वह अत्यन्त अनुर था ।

—बशादरलाल नहरू

मनमिह देव वाचम धनमकी मित्रा ज्ञानमकी सपन रतनेबाने  
भारतीय ज्ञानिवाधियाके प्रथम मुगके उग्रानक और प्रवर्धक एव १० व में  
साक्षात् साक्षात्सरायके साथ देव निष्कालेकी राजा बानबाने सरदार अग्निमिहक  
छोट आ सरदार विद्यामिहक एक थे । सरदार विद्यामिह भी मनमिह  
क बेटे-आने मित्रा न थे । सायासदकी हानकम न हूँग-हूँगने येन आनेके  
जानक रहे । इस प्रकारका और राजा जिनकी मन्त्राली धननिधाने हो

रक्षा का वह जनसिंह भारतीय निर्दोषी सरकार द्वारा २१ मार्च १९३१को  
शामको घुंकीपर चढ़ा दिया गया ।

जिस समय भारतकी उठती हुई जबानी अपने कानि कर्णोंपर पोरी  
प्रमत्ताके बोझसे मस्तक झुका बैठी थी उस समय भक्तसिंह मातृभूमि की  
तरङ्ग देखाकर जोर खाने लगता । भक्तसिंहकी दुनियाका बाँकीमें मुकी  
और हरबत्वार देखनेके लिए इस सन्मत्त परिवारके कुटुम्बिया और स्वयं  
भक्तसिंहके पिताने भक्तसिंहकी छाती रक्तजीतसिंहके सामनाकी एक  
छड़कीसे करना उस किया परन्तु भक्तसिंहकी जबानी तो समुद्रकी लोली  
कहूँसे घुलनेवाले भारतके चरखोंपर चढ़कर अपनी मस्ती को चुकी थी ।  
बैठियोंकी झंझरोंमें बिपक्षोधी मूर्च्छना गुलनेवाला वह तबल बिचाहकी  
सैयारियोंपर कात मारकर छरार हो गया । वो साफ तक काहरी दुनियाको  
चुका पता नहीं लगा ।

बोड़े दिलों का साहस-कमीशन बना । जनसिंहके काने काटकर  
देखा । बोरी परमेश काकोका माय्य सिद्धन आयी । उसके चंचल तबल  
मनने छोटा 'क्या हुआ है माय्य हूय बिचानके लिए का-कायक ?' उन  
समय देसका अनुयायी होनेकी अपेक्षा अपने-आपका अनुयायी होना उसने  
अधिक मूल्यवान् समझा । बिचानकी ये ही सीमाई है जिन्हें बदना और  
बदमानके अतिरक्तमें तरनाई काँच बैठती है । उसका हृदय साहस-कमीशन-  
के दोड़-भूपके अपमानसे भर रहा था पर अभी आखिरी चोट लगना बाकी  
था । साहस-कमीशनके विरोधक बुद्धिसे बच-योगी भारतीय मत्ता पंचाज  
कैतरी लाला काजपतराका जाना और नुई समयमें पुलिसके हाथों लाठियाँ  
लाना हिनाकयसे द्विज महासागर तकके तरखोंको बैठावु कर देनवाली  
बदना थी । उस समय बैहलीकी समामे लाठी लाकर कपड़ों हूय काता  
कीके नुईसे निचका था कि 'ये लाठियाँ भुसपर नहीं ब तो बिटिस साम्राज्य  
पर पड़ी है । अगर इस और ऐसी जग्य बटनाओसे हमारे तरन हमारे हृदयसे  
बाहर हो जायें तो इसको जिम्मेवारी सरकारपर होती ।' स्वर्गीय देवधाम



विश्वरंजनरासकी कर्म-पत्नी श्रीमती वासन्ती देवीने साक्षात्कीके पिटनपर सम्स्त देशकी तरफाईपर जानत भेजी थी। उस समय देशके हम नेत्राजाने भारतीय तरफाईने कुरबानीकी ही उम्मीद की होगी न कि उनके हम केवल और हाथ बसा पड़नेकी। किन्तु बुद्धी गम्भीरताका नाम तो तरफाई नहीं है। उग्रहान आना दूसरा ही पक्ष पकड़ा और जो पक्ष पकड़ा उसका कारणोंकी उग्रहानि खुले विरक्तके सामने रख दिया। यद्यपि देश तरफाकी अहिंसाके क्षेत्रमें तैयारीके साथ आसन्न कर रहा था तथापि दीर्घ माना हम पक्ष-भूक्तोंको उल्लेखनीय बसतु थी।

### बलिदानकी तैयारी

१७ दिसम्बर मन् १९२८ को गौली बली और धो जे धो साउन घांसोने बीच बिना गया। मुन्गी बलनसिंहको गोली बजानी पड़ी। बलनसिंह स्वयं भी गोली घाटर मारगामी हुए। इन तरफ मारमन-मन्त्रकके निर्माप की बेहोपर इन दो—अंगरेज और मारतायका गुन बढ़ा। बिन तरफाने मोली बलामो धी उग्रहाने देशके अहिंसा-मन्त्रकी बरबाद न कर गुनका बरना खुने केनके बरने जालिकारी पनका पूरा दिया। बुद्धि दतनी हातिमार कि एक साक तक अपराधियोंका पता न लगा गयो। इनके बाद उसने बाई बिन तरफकी बाई जहाँ बिन लगेरपर निरपहार करक अपनी बड़का परिचय दिया। उस समय उन निरपहारियोंके लगेर हा बरपय था। इनके बाद ४ अग्रेक १ २९ को असेम्बलीकी गौरीकी बस्य बरनेहाले प्रनिरेष्ट पने सरकारकी औपचारिकीके परिधान पत्रिक केटी बिन ( जम-गहा-गानुन ) पर अगला बरपय देश भारतीय मावनकी दीप बाई प्रगामीन बू होकर भी अब एक गया छयाय भरने जा रहे ने लकी मानो भारतीय बड़ानेके इन तरफका बगान करनके लिए असेम्बलीके उगार एक बढ़ावा हुआ। बिन समय अउरपीकी पत्रिकीके लिए अउरपे बलामो जान लकी उगो समय आने-याव बुद्धिके सावने जाकर बगानिगन बहा

‘संसारके बहुरोंके काम खोजनेके लिए मैंने बम केंडा है। यह है मेरी विस्तोष। आप मुझे सीकते निरुपगार कर सकते हैं।’ बहुरोंको आवाज देनेवाले इस तख्तको और उसके मतवाले साथीको थोड़े दिनों बाद कानून का प्रसाद मिला। बटुकेरवार काके पागोकी कइवी घूट पीन बछा और मगतसिंह अपनी तहसीलके मने पट-परिवतनोंका सामना करने—अर्थात् सरकार-द्वारा बकाये जानेवाले गये मुकदमोंके समिपुक्त बनकर काहोर जेलमें बसे मने।

## रत्नोन्मकी शाहादत

राष्नीयतापर प्राणोंकी बाजी बहा देनेवाले इन तख्तोंको काहोर जेलमें एक नया सिलवाइ मिला। जिस तरह रत्नोसे बड़ी सोनेकी अँगूठी बनाने वाला सुनार किसी मजदूरी हुए आलस्य कार्योंकी बाधियां सुनार देनेकी धुनमें थोड़ी देरके लिए अँगूठी अलम रख देता है वैसे ही इन पनलोंकी मण्डलीने जेलके राज-बन्धियोंपर होनवाले दुर्म्यबहारोंको बुर करनेके लिए काहोर जेलमें १५ जून १९२९ स अनशन प्रारम्भ किया। एक-बा दिन नहीं पसबाइ और महीने बीतने लगे। उपवास जारी रहा। राष्नीयताकी बय मगाती हुई कमियां मुरझाने लगीं। उपर सरकार अपनी क्रूरतापर अटक थी। देवत-देवते २६ दिसम्बरको तख्त आत्मिकारी यन्त्री परमाक निधारा। सरकारने ममता कि बस अब इन अराजकी छोटरोके होघ टिकाने मय आवेंगे। परन्तु इधर तो भीतको ब्रेथीकी तरह पसे कमालकी हवस थी। अन्तमें भारतकी तख्त बृहतापर विटोना प्रोत्साही पंजा डीजा पड़ा। राजनौतिक हँसियोंके बजे बन और उन्हें सुग-मुविचारों देनेकी सरकारने प्रतिज्ञा की।

इधर भारतीय तख्तों उपवासके आननमें भीतको आत्मन दे रही थी उपर भारतका फोजदारी कानून अपने जीवनक इतिहासके एक नये परिच्छेदमें नामा रन भर रहा था। उसे मांगो इन तख्तोंसे रत्ना-निधार्

खोजनी थी। यज्ञीओं उपवासके बाद एवं नरकार-द्वारा हो सभी दकताको यन्त्रधामके भीवनके बाद जब वे तब अपने मुकुटमके लिए महात्म्यमें उपस्थित न हो सके तब एक नये आर्चनेम्स-द्वारा यह कानून बनाया गया कि अभियुक्तको शीर्खाचिरोमें भी मैजिस्ट्रेट एक बकीलकी सहायतासे अभियुक्तके दोषोंपर विचार कर सकता है और अपना ऊँठता है सकता है। सम्मता और न्यायके मुँहपर कानूनकी यह सफेदी लपेटकर इन अभियुक्तों का ऊँठता किया—सरकार मयतसिद्ध राजपुत्र और मुखदेवकी क्रांतीकी सहा हो गयी।

### माताके चरणोंमें भट

ब्रिटिशकी लहर हिन्दीकी कालिक पोंछनेमें व्यस्त थी। बीसवीं सदीके प्राक्-यात्तक साधनोंपर बैठकर माथीसे अधिक दुनियाकी ल्याम खींचने वाली ब्रिटानिया साम्राज्य और ठगरी बूँदोंकी ताकतकी पत्थरोंकी पहारदोबारी में अधिक बेर बन्द न रख सकी। यह काँप रही थी। हार्ड हांडस और देहलीने मरवाहाकी देहलीपर मस्तक झुकाया। बाकूसे तक निकालनेवाले आघाचारियोंने सीमा मयतसिद्ध बच गया। भारतके नीतिज्ञानोंको यत्नमद की रस्ती इस बार नहीं छू सकेगी। पर ये सपने ही रहे। इपर पान्थिक धर्म बच रहा था जबर हमारी बयनीय विषयताकी छोकर लगाते हुए देहलीकी प्रतिहिताने बरजकर कहा 'मयत राजपुत्र और मुखदेव कानूनके पिछार है। आशाव अँकरेइने सूनके समेहपर निरञ्जित होनवाले बयाने ईदीकी कोई ताकत नहीं बचा सकती। २३ मार्च १९११ आखिरी दिन है।'

काठिलकी नृपिके नीचे तकने हुए बज्जेकी देखकर जाबार मायकी तरह अबाविनी माताने एक ठगरी आइ लीची और फिर देखती रह गयी। भारतीय तद्वर्द्धने मयतकर प्राप्ता की

“जननी जन तो मगत जन

यो दाता यो दार।’

भगतसिंहकी उम्र तेईस-बौबीस की थी। सन् १९२१में उन्होंने लाहौरके बी ए०बी स्कूलका परित्याग असहयोग आन्दोलनकी लहरमें किया था। भगतसिंहके दादा बाबा सरदार बर्जुनसिंहने अपने दो सिंह व्यक्ति और मुकबको मातृबेटीपर १९ टमें बेतमें बाग किया। भगतसिंह, उनका पोता उस परिवारको जोरसे दिया गया तीसरा उपहार था।



## रवीन्द्रनाथ ठाकुर

बिम्बकप्रवर काका कासेलकरने एक बार रवि ठाकुरकी कविता पढ़कर आगे कथमको इस तरह उपस्थित किया था

‘ककी बोली ज्यारे फल गुम कहाँ हो किजनी दूर हो ?  
कल्पने अन्तरहृदयमें-से पुकारकर कहा देखि धी तो तुम्हारे ही

हृदयमें निवास करता है तुम्हारे पास ही है ।

रवि ठाकुरने अपनी किसी यश-मुक्तकमें एक उपमा देते हुए कहा था ‘नाचमें बैठा हुआ केवल बगो अपराधी नहीं है जिसने उग बछ्खो नीचाम छेद कर दिया और पालोका माचमें भरना सुपम कर दिया किन्तु वह भी अपराधी है जो बड़ते हुए बानीको जल्मी-जल्मी कँक नहीं देता और अपनी तथा मावियोकी रतामें जुट नहीं पटता । लगना है गुम्बर रवि ठाकुर इस मङ्गल देशकी परिभाषा लिखते थे और पाण्डीबी परिवाराके पराहृत्य उपस्थित करते थे ।

रवि ठाकुरने जाति भाषा और सम्प्रदायके छाट छोड़े घेहोंको नार कर लिया था । कदाचित् इमीन्ग्लिश भारतवर्षमें अपना राष्ट्रीय गान गुरदेबके जन-यश-मन बाउका बनाया और कदाचित् यही कारण है कि रवि ठाकुर की ईश्वरशक्तिमें स्वराज्य मिलनेपर उनके बिस्व भारती नामक दैनिकिक विरचविद्यालयमें अपना उपकुडानि स्वतन्त्र भारतके प्रपाल माधी वं अशाहृत्य नामकको चुना ।

रवि ठाकुरकी पदक-पदक बहुत निकटने घेने परलपुरके शिरो-जाशिय सम्मेलनमें देगा था । सम्मेलनके समापन प्रसिद्ध इतिहास रचनीय थी श्रीरामेश्वर हीराचण्ड आता थे । भरतपुर राज्यके बने-बने मामल ममात्र उपस्थित थे । उम सभामें स्वर्गीय राजनि श्री पुरातनब्रह्म टण्डन भी विद्यमान

वे । रवि टैगोर रैरायी कथावा पढ़ने हुए थे । उनकी छाड़ीके बालोंमें गुमलाकी बोर बोर-बोरसे कबम बहाया था और उनकी आँखोंके तेजस्वी पानीमें स्वच्छ आरुका तरङ्गलत मविभ्य खेल रहा था । वे मध्यमक-जैसे कोमल शब्द बोल रहे थे । उन शब्दोंमें पूर्वो-जैसी सुगन्ध पलों-जैसा हरियालावन और फलों-सा मीठा स्वाद अनुभव कर लोग पड़पड़ हो रहे थे । जब मैं उन शब्दोंको सुन रहा था तब मेरे पास बरछाहीव समेकाकर 'दिघार्बी' भाषाई सद्गुरुवरण ब्रह्मकी श्री ह्रीराज्यकजी जन्मा तथा श्रीमती कमलाबाई साहिबा बिबे श्रीमती विवेक रस के रही थीं बवाकि उन्होंने अपने भाषणमें बस हम्मैकर्ममें कहा था 'इम नारियाँ ह्योने बुद्धियाँ पहनती हैं और सबैक एक मात्र अपन बतिका बनकर रहती हैं । जान इस बुद्धिदार पैजामे-में क्या है कि शिशु पुरपन भी कहता कि वह बहुगोक सामने मुकनेवाला हो जाता है । यह बलवसे कहना आवश्यक नहीं है कि श्रीमती कमलाबाई साहिबाके पति श्रीमन् सरदार बिबे बाह्य उन दिनों इन्दौरक डिप्टी प्राइन्सिपलर थे ।

श्रीमती कमलाबाई साहिबा बिबे श्रीमती विवेक रस के रही थीं बवाकि उन्होंने अपने भाषणमें बस हम्मैकर्ममें कहा था 'इम नारियाँ ह्योने बुद्धियाँ पहनती हैं और सबैक एक मात्र अपन बतिका बनकर रहती हैं । जान इस बुद्धिदार पैजामे-में क्या है कि शिशु पुरपन भी कहता कि वह बहुगोक सामने मुकनेवाला हो जाता है । यह बलवसे कहना आवश्यक नहीं है कि श्रीमती कमलाबाई साहिबाके पति श्रीमन् सरदार बिबे बाह्य उन दिनों इन्दौरक डिप्टी प्राइन्सिपलर थे ।

रवि टैगोर जल्दी बोलाकमें बहुत बड़े आत्म होतें थे । यह कहना आवश्यक नहीं है कि उनका परिचय अधिक कमकोला का था उनके शब्द । वे बाधा-विनिग्रह शब्दोंमें अपनी बात कहें या रहें थे और भाषा उन शब्दोंमें दृढ़-से बने थे ।

एक बार मैंने मुद्रैकको कथाचित् रन् १९५२ में दार्जिलिङ्गके उत्तराञ्चलमें दगा था । मैं आई बनारसीधामजी पत्रुबैरीक भाष्यपरान् अनेक शिरी-बायो देखकाके साथ दार्जिलिङ्ग गया था । बकवर्ताम हम लोग किसी पैगिण्डर में बने थे जो दार्जिलिङ्ग विद्यालयके बोलापुर नामक स्टेजपर समयम बस-आरु बने पहुँचती थी । देख स्टेजपर हमें

यथास्थान पहुँचा देनेवाले मित्र उपस्थित थे। क्यों ही शान्ति-निकेतनकी सीमार्ग मैंने प्रथम क्रिया भूमि प्रारम्भमें कुछ निराशा-सी हुई। न तो वहाँ किसी मरीका छट बा न विख्या और सत्पुङ्गवों-से जबरन वे न सिक्खोंपर बहरी-सी सड़के थीं न विचारोंसे उत्तरती हुई पयश्चिमा ही दिनाची की थीं। किन्तु योड़ी ही देरमें मेरा मन हवाओं बर्य पीछे पहुँच गया और मैं भारतके स्वल्पयुवको अपने सम्मुख देखने लगा। छोटे-छोटे सोंपड़े मिट्टीकी सीबारोंवाले और उन सीबारोंपर मङ्गलारत और रामायन कालकी तथा कुछ जातकोंकी घटनाओंके चित्र बने हुए थे। सोंपड़ोंके डारवर उन निपटका वाक्य देखकर मेरा मन बहुत ही छल। योड़ी ही दूर जाने मैंने शान्ति-निकेतनका कलात-कम देखा जो एक बुझके लोले था। काली अपनी मर्बादाकी सम्पूर्ण रक्षा करते हुए बड़के और कड़कियाँ बड़ी उपस्थित थे। अपने बर्ब-मुत्ताकार विद्याबिम्बों केन्द्रमें बैठे हुए अध्यापक बड़े ही लगे मासूम होते थे। लगता था वे प्राध्यापक उन प्राध्यापकोंमें निपट हैं जो कौन्सों या विरविद्यालयोंमें पढ़ाते हैं। अध्यापकोंके बड़ानेकी सीली ऐसी थी जिसमें-से अध्यापनका र्व बड़ी बाहर नहीं आ रहा था। लगता था यदि बड़ानेवाले लड़के लड़कियाँ किसी लयमें विद्यापी बड़े या बड़ने हैं तो प्राध्यापकको भी किसी लयमें वहाँ विद्यापी ही बड़ना पड़ता।

एवं ट्यकुर जिस स्थानमें रहते थे उसका नाम था बत्तरावत। वहाँ हम लोग जाकर बैठे थे। वहाँ एक छाटा-मा खोलेष्ट और लपटाका बगल बना हुआ था। वहाँ आचार्य शिरीगुमोहन केनजीने इनके बड़ा कि एवं ट्यकुर सोंपड़ोंमें और मिट्टीके परीमें रहना ज्यादा पसन्द करते हैं। यह मुनकर मुझे लगा कि हम लोगोंको भी बनारसीराम बनुरेही किसी बारा गार्ग नहीं बसोड लगे हैं। बिनाके तीर्थ स्थानमें के जाने हैं।

अपीरी और बड़ीकीने परे एक निमल प्रतिभासोत्ता बड़ी नेल रही थी जिसमें पूकोंकी तरह मुक बापीमें भी रंजो-बरा गुणविन बरब निगरता और विचारता रहता है और जब मुझेबड़े बत्तरावतमें में रहें हैं

तब उनके बचन कर ऐसा कहा मागो बिहड़र डीबन्तर ताराचन्द्रका यह कथन सबदा सत्य है कि छायाबाब और रहस्यबाब अन्तर्गतके ही कम हैं। और आज जब चरण-चरण चमकते हुए विनोबा भावे यह कहते हैं कि हम और राजनीतिज्ञ युग समाप्त हो गया अब तो दर्शन शास्त्र और विज्ञानज्ञ युग का गया है तब ध्यानि-निकेतनकी बाबोंकी पृष्ठभूमिमें विनोबा भावेके ये विचार बहुत ही अचानक दिखायी देते हैं।

जब हम लोक सौन्दर्य हजारीप्रसादजी ठिबरी ( जो उन दिनों बर्हि हिन्दीमें आया था ) के घर जाये तब हमसे किमीन कहा आज मुन्देर अपने जिस भारतके विद्याविदामें आपन करने पचारनबाक है तथा मुन्देरकी यह बुरी आदत है कि वे कम्पकसेसे जाये हुए धरने विरोधियाका उक्त सम्मान नहीं जाने देना चाहते। मुझे ऐसा लगा कि अष्टकी नारबाबीसे प्रभावित हम जाय लपटा रबोन्मनाथका समस्तनमें असमर्थ-से है। यदि लपटा सचमुच माताको तरह है वह अपने विचारोका प्रयत्न करता है उन्हें बुझाता और संवारा है उन्हें अपने अन्तःकरणसे लोगके अन्तःकरण में खेत्तनके लिए निबवाता है उन्हें घुटनके बल मुकुर भीचेसे ऊपर उठाता है अपने अन्तर्यक रक्तका बल लेकर उनका वास्तव-मापन करता है ता अष्टकी कीन माता एमी है जो यह वह सबेगो कि एक और वह बन्नीको जग्न विप जाये और दूसरी और उनका हृषाए उन्हें काट-काट कर टुकड़-टुकड़ करता जाता जाये।

ध्यानिनिकेतनके साथ लगा हुआ धीनिकेतन भी मीने देता। उन दिनों बिदेसोंसे जाये हुए डॉ. निरिबरसहायजी धीनिकेतनमें काम कर रहे थे। धीनिकेतन जिसभारती विद्याविद्यालय ध्यानि निकेतनका यह स्थापन है जहाँ नावकी परिचयकि लिए लोग तैयार विये जाते हैं। सत्य ही यदि अन्तर्य माँझी सेवा करन योग्य नहीं है तो उसका अर्थ ही क्या देय रह जाता है? यही आकर मामूम हुआ कि नन्दस्यक बोस-नैते बनावके प्रख्यात कदाचारक विभासे धीनिकेतनकी शोषहिनी मुपाजित है।



ग्रामीण बीतोंमें गुबरेव वहाँ ऐसा रस कैसे देखे गये मानो वह अन्य लोकके नहीं इसी लोकके प्राणी है। वे ग्राम-गीत जबवा ग्रामीण-गीत मधुर तो वे ही साध ही यह भी सुचित करते थे कि ग्रामवासिनी भारती यश इत पोतोंमें बाधा कोहनका उपक्रम कर रही है।

कमठा है चिन्तन धीरे धीरे हमारे विभाग और समझी जेबाइबके नाम है। वहाँ विचारोंसे जाचार बदलतेहैं इनकार करता है और भाषाओं को भीड़ भाड़में विचार जेबा मस्तक किये बना जा रहा है। कमठा है एक मिर है दुसरा बड़। वहाँकी चादियाँ पुकार-पुकारकर कह रही हैं कि जेबाँकी तरछ बाधो जेबाँकी तरछ बाँगे। मानो वह बाधी जाचारों-से नहीं विचारोंसे कही जा रही है। वहाँकी बाँवकी संझाम छोटी छोटी टिम-टिम दालिबोंको देखकर याना हमारे बरके शाखिपका जान और हमारी रचनाओंकी पहचान हुए बिना नहीं रहती।

यहाँके हरियाळे बुझाँमें धुमन्धित कून हमारे स्वाना-बीछे ही कमठ है परन्तु धाम्ति-निकेतन और धोमिकेतनकी पुष्ठभूमिमें छोटा-सा अजायब घर वहाँ मुझे बड़ा अल्ला लगा। ऐसे अजायबघर तो हमारे बाँव-बाँव होने चाहिए जिससे ग्रामीण सींग अपने बाँवमें होनेवाली उपजको जान सकें और अपने बाँवकी उपजका जेबा-जेबा रस सकें। उन अजायब घरमें लम्बाका बोसकी सजुबा जाते हुए ग्रामोबाँकी मूर्तियाँ तथा वहाँके बातावरणकी एकजिह्व वस्तुएँ मनपर ग्रामीण प्रभाव डाले बिना नहीं रहती। इसी तरह कपड़ेके नमूने चिबोले नमूने अन्य वस्तु-वस्तियोंके नमूने और वनके वनों तथा प्रसक्तोंके स्वरूप बड़े प्यारे लगे।

इन सबको देखकर यह विचार भी आया कि इन सब वस्तुओंसे अलप रहकर रबीन्द्रनाथ जेबा जाते बाँके कह के पाते थे और इबाएँ बप पड़के भारतीय आदि जीवनका दर्शन कैसे कर पाते थे। कमठा है, इन बाख्खे-तेरख्खे वर्ष बनाये गये हमारे काम्मबाओंका मूख्य कुछ भी हो बिन्तु बेबाय हमारी ऐसी निधि है जिससे इन दूर नहीं रह सकते और

दूर रहकर बसतुक्त किए उपशान्ती भी नहीं हो सकती । हमारी सहिष्णुता को अनुप्राणित करनेवाके तत्त्वोंकी हम असहिष्णुतासे सम्पर्क । हुआई महाश्व-के महाशक्ति-सी ठीकी कृपकली-सी विस्तृत और महाशक्ति-भी महीरी बाँके ही हमारे पास कहाँ हैं, तब बलवति स्थिति और विपत्तिमें हमारे बेड़े पार लगे तो कैसे ?

कविहर रवीन्द्रके सङ्ग्रहमें श्रीमिकेतनके स्थापित करमका उद्देश्य यह है कि ज्ञानका कौटुम्हिक अपनी पुष्पतापर पाँचमें लाया जाये । उन्हें कम करकील और आत्मनिम्हिल होनेका बुर बनाया जाये । उन्हें सुभावा जाये कि उनकी भा कोई इच्छा है और उनकी भी रखा होनी चाहिए । वे अपने देशके उन सांस्कृतिक व्यवहारोंका जानें समझें जिससे वे बसमान जाति पढ़ाएँ और साधनोंका अपने आस-पास उचित उपयोग होते दल सकें । जिससे उनके शरीर बलवान् हों उनके मन बायोकेसे-बायोके बायोके मोक्ष सकें और वे अपनी आर्थिक दशाईं सुधार सकें ।

हमारा तो उद्देश्य है कि अपने आस-पासके बीच-के पाँचोंको हम पूरी स्वतन्त्रता दे सकें । जिसमें पाँचमें शिक्षणका प्रवेश हो सके और अपने आत्मनोर्मि प्राचीन अविशुद्धि कर सकें । प्राचीन-मैत्र हमारे वास्तव और वाच और नृत्यके काव्यकलाके देखने-सुनने समूह बनाकर घर-आटा हैं वैसे ही हम उसका इन कामोंको देखनेके लिए सोझने-शीघ्र पाँचोंमें जा सकें ।

जिस तरह भूयध्वे मूयकी करमी और पुष्पकी दक्षवटने और-कोरे ऐसे पत्थर बनने लगते हैं जिन्हें हम हीरा पुष्कराम और जाने बिना-बिना मायोंके रत्न कहने लगते हैं वही तरह संप्रभवी दक्षवटों और हृदयकी कोमलगाई साहित्यमें कविताके ऐसे रत्न बनने लगते हैं जिनकी बामासे संसार चमकता हुए बिना नहीं रहता और जिन्हें धारण कर बहु अपनेकी औरबान्धित अनुभव करता है । कुछ सोच ऐसे रत्नोंकी बिसर्तकी हिमामें अधिक निपुण होते हैं कुछ ज्ञान काँचके टुकड़ोंकी बिस-बिसकर चीन्टोंमें

जमा लेते हैं और भेद-बुद्धिसे आग्रह करते हैं कि कौनके पन्ही बिसे-पिसे टुकड़ोंको रख कहा जाने लगे। कुछ स्थानोंपर सब उसी प्रकार बेकार कपन करते हैं जिस प्रकार बड़ी नदियों और बोबे सरोवरोंके घाटीपर यात्रियोंसे छाकी बंधी हुई नौकाएँ बेकार बीच पड़ी हैं क्योंकि मरमच्छर लेकर मछलियों तक सब कुछ यतिहीन बाराक कमरेमें गड़गा रहता है और हम 'कुछको सब कुछ मानकर नीकामाके आस-पास ही बैठकर रहते हैं।

धार्मिक-नियेक्षण और धीनिकतनमें मानो रबीन्द्रनाथ और याम्नील साय-बाबू बोलता हुआ खीट पड़ता है। वह माना पुकारकर कहता है कि हमारी विभिन्नतामें एकता निवास करती है। क्या ही अच्छा ही कि इस देशकी ओरस संसारकी विभिन्नतामें एकता स्थापित हो सके और हम रबीन्द्रनाथकी मज्जी तरह पहचान सकें।

भारतीय संस्कृतिका औरत और उपनिषदीय सुखोंका वैभव मुखेबकी रचनाओंमें स्पष्ट बीच पड़ता है। कनता है उनक रहस्यबाहने सबका रहस्य मुर्गे-मुर्गेको जैट सफ़ेदबाकी मायाम व्यवहृत हुआ है। वे निरी राष्ट्रीयताको अधिक महत्त्व नहीं दे पाते वे और उसे कमी अन्तर्राष्ट्रीयताक भावे नहीं माने देना चाहते थे। वे चाहते थे कि :

“जहाँ मस्तिष्क मगहीन और मस्तक जैसा उठा हुआ है,  
वहाँ ज्ञान मुक्त है और विश्व संकुचित सीमाओं में  
विभाजित नहीं है

वहाँ राज्य सत्य की गहराई में-स जम्म धारण करते हैं,  
आर वहाँ अथक यत्नशीलता सम्पूर्णता की ओर आगे बढ़ती है,  
वहाँ विवेक की शुद्ध धारा रुढ़ियों के रेगिस्तान में मार्ग नहीं खो  
पैठती  
वहाँ मानस ऊष्णमुत्ती हाकर विन्तर बिस्तार पाते हुए विचारों  
और क्रियाओं में आगे बढ़ता है,

उस मुक्ति के स्वर्गमें—

हे परम पिता !

मेरे राष्ट्र का जागरण हो !”

हमारे बीचकी विभेदक रेखाओंको तोड़ना और गलत माना माना जनका वृत्त का । सारा भारतवर्ष और सम्पूर्ण जगत् ऐसे ही भेदहीन और भेद-मुक्तिरहित रवि ठाकुरके कुछक वरि और बर्बत्ति पदचारको याद करता रहता है याद करता रहेगा ।



## परिचित मोतीलाल नेहरू

सबसे पहले परिचित मोतीलालजी नेहरूके सम्पर्कमें आनेका सुझावसर मुझे अहमदाबादके अखिल भारतीय काँग्रेसके अधिवेशनमें मिला जो घायब सन् १९२१ में हुआ था। उक्त अधिवेशनमें सभापति मोतीलाल बहुत कष्टम भोगा थे। इरिजमोंके सियु किये गये परबदा खेलके कम्मे सपवासके बाह काग्यीजी घूटकर साबरमती जावे। कान्तिबादी श्रीगोपी नाथ साहाके बकिशानके प्रश्नपर बेचबन्धुदास और पण्डित मोतीलाल नेहरू एक तरफ़ ब और महात्मा गान्धी तथा मीलाला आचार दूसरी तरफ़। स्वभावतः प्रथम तो काँग्रेस कमेटीका नियम स्वर्ण्य था बास व माठी छाकजीके प्रतिकूल ही गया। पण्डित मोतीलाल नेहरून बर्बना की मुक्त इस कमेटीक प्रावबसे कोई नहीं हटा सकता। यह वेरा बेरा है और य छरीरको बाटी-बोटी इस बेचपर उच कर पूरा। बितन ही उपस्थित सरस्वोंके ही नहीं स्वयं महात्मा गान्धीके नभासं उन समय अक बरस पड़ा था। मला इतनी बड़ी रघाप्रमवी विमूक्ति को छोड़कर पान्धीजी इन बेमके सियु करते भी तो क्या करते? स्वयं बेरा बन्धु पण्डितजीकी बतिविचिमोका जाने किस तत्परतासे बेरा रह ब।

अन्तमें काँग्रेस कमेटीका निर्णय वही हुआ जिससे यह बेरा तो बचा ही काँग्रेस जी टुक-टुक होनेसे बच गयो। यह गान्धीजीके आसुर्जोंकी भीत की या पण्डित मोतीलाल नेहरूके रघावकी कहना कठिन है। अमरा था पान्धीजीके आसु उस समय बसबाग भुजा बनकर मोतीलालजीके रनेहपर पहरा दे रहे ब। यह सचमुच छरब और घासब कान्तिबाद और गान्धीबाद दोनोंके एकीकरणका दुर्लभ क्षण था। उस दिन मैं पढ़ने-पढ़न मोतीलालजीको इस बेराके गीरबके कम्मे देखा था।

दूसरी बार मैंने पण्डित मोतीलाल नेहरूको सन् १९२९ में देखा। तब व प्रेस व राष्ट्रका कार्य करनेके लिए जबलपुर प्यारे और राजा गोकुल-सके महलमें ठहरे थे। उस समय जब वे जबलपुरसे कटनी जाय और मुझे अपना दौरा प्रारम्भ किया तब श्रीमान् गुर्गार्थकर मेहता सेठ मोहित स पण्डित द्वारकाप्रसाद मिश्र और मैं तथा अन्य लोग उनके साथ-साथ किन्तु जब वे बीना जाकर लखनवाकी और जले तब इनमेंसे केवल मैं और पण्डित द्वारकाप्रसाद मिश्र ही उनके साथ थे। साथमें था रामदयाल मुखर्जी और जायराके विरोधवि बन्धु जैसे ठेकस्वी ठरुच भी थे जो पण्डित मोतीलालजीके लिए स्वारथबलक वस्तुमानों सार-सम्हार रक्षक। उन समय पण्डितजीके साथ उनक सैक्रेटरी श्रीदयाश्याम और उनक क सम्पत्तिमय सेवक थे जिन्हें व हरि कहकर पुकारते थे।

रैलमें पण्डित मोतीलालजीके अध्ययन-क्रमको देखकर मैं हफ्ता-बगडा ह गया। व अपना कुरता तक फेंककर दोनों साटाके बीचकी जगहम झलोचा जाकर अपनी अध्ययन-मामची रखे हुए थे और उसमें निधान लगा रहते। रैलके चलन और ठहरावपर व बिलकुल ही ध्यान नहीं दे रहे थे।

उन्हीं दिनों गाँधेसके एक प्रबल विरोधी श्री रायबन्धुराव घायल गमूरीमें पण्डित मोतीलालजीका चुनौती दे आये थे कि उन्ह (श्रीरायबन्धुराव को) छाड़कर मध्यप्रदेशकी कांग्रेस टुकड़े-टुकड़े हो जायगी। अपने हीरेमें पण्डितजी इसभाषकी जीब भी करना चाहते थे। जब पण्डित मोतीलालजी लखनवा पहुँचे तो एक नामी-मगामी नेता कांग्रेसके विरोधमें भाषण दे चुके थे। व तथा पहले कांग्रेसी ही थे किन्तु अपनी छह महीनको विरोध यात्रासे पीटकर कांग्रेस विरोधी हो गये थे। उन्हाल लखनवाकी जनतासे अपील की थी कि मैं इनने बर्षोंका बूटा हूँ अतः मेरी बात मानकर आप कांग्रेसके अन्दर न पड़ें। पण्डित मोतीलाल नेहरूने बकासतकी अष्टतासे अत्यन्त और-सम्भोर स्वरमें उन वाचनोंको खर्चा करत हुए कहा था उन नेतासे मर कोई सम्झ नहीं है स्नेह ही है। किन्तु छह महीने

पहले ठक से कपड़े में रहे हैं और उनका काँसेसके समर्पणमें बकतव्य है। अब हमारे सामने प्रश्न यह है कि हम अपने भताजी भारतमें रहनेवाली समस्त बीवनीका धार मानें अथवा बिलायतमें छह महीने रह आनेवाले नताजीकी बात मानें। मेरा निवेदन है कि आप इस देशकी परिस्थिति जानकर बकतव्य देनेवाले नताजीकी बात मानें—। उस समय अपने मुँहसे कट्टू खब्ब बिलकुल न निकलन देनेवाले पण्डित मोतीलालजीकी कबनीको सुनकर मेरा हृदय पतंगद बा। मैं उन दिनों ब्रह्म उदय बा और पण्डित मोतीलालजीके धैर्यसे असंतुष्ट। किन्तु अब मुनाब हो चुके तो काँसेसकी प्रणय बिजयके रूपमें मैंने देखा कि स्वर्गीय पण्डित मोतीलालजीका धैर्य और बोलनेका निवायब किसने बलवान् रूपमें बिजयी हुआ।

एक बार मैं स्वर्गीय पण्डितजीके साथ बैतुक बा रहा बा। इटारसीमें ट्रेन बरकतो थी। इटारसी स्टेशनपर तत्कालीन भारत सरकारके चार्ल्स और लेडी इनस' मिस गये। पण्डितजी छातीकी टोपी छातीपर कुरता और सम्भूष छाती परिवेष्टन बड़े गले माकूम थे रहे थे। उनका और बर्न मानो बिल उठ्य बा। उनकी छातीपर कोमल आलेप-सा करण हुए केडी इनस'ने कहा 'पण्डितजी 'छातीकी टोपी पहनकर तो आप पहचानमें ही नहीं आते। पण्डितजीका कबाब मानो आप आलवाली पीड़ीका कबाब बा। वे बोले 'अरे आप मेरे इस छेते-से परिवर्तन-से पचका बमी? हमारी आलेकी पीड़ी तो हमारी पीछेकी पीछियाँ बलनाकर परिवर्तन करेंगी। मैं तो इसी आसामें काम कर रहा हूँ। पण्डितजी अब कबाब थे रहे थे उनके चेहरेपर स्वेपका मिशान नहीं बा। वे बरयन्त ठण्डे स्वरमें बोळ रहे थे।

पण्डितजीक बैतुक पहुँचनेसे पूर्व होर्षगाबादमें एक बटना हो पबी थी। उसकी प्रसंगबस चर्चा आवश्यक है। हुआ यह कि एक नेता होर्षगाबादमें आये। नमदाकी पवित्र घाटीमें उनका आपण हुआ। होर्षगाबादके कोम बिसेपत बीन और बीजब है कुछ मुसकमान भी हैं। नताजीको इस

जातका बहुत शीक़ बा कि ये जहाँ-तहाँ हिन्दू और ब्राह्मण होकर भी अपने मोक्ष जानेकी चर्चा करते थे। अतः जब उनकी समाई में जाती तो एक यन्त्रधर्मेने बहुत नेताजी याने बस्ता महीबमसे सरारतन समाके बीचमें छोड़े होकर पुष्प कि न सिर्फ़ मोक्ष ही जाते हैं या मछली भी? नेताजीने सड़क माथेसे उत्तर दिया 'जी नहीं मैं बेबल गोष्ठ जाता हूँ। गर्महाके जाटकी उस समाके बीप्याम और बीम यह सुनते ही एक बड़ी तादात्रमे बहुति बिसक गये और समाकी उपस्थिति बहुत कम रह गयी। उक्त समाके समापतिजीकी इसपर इतने ओरसे मुस्ता जाया कि उन्होने लाल मिवाहीकी अपनी इबात उक्त प्रश्नकर्ता सदनपर फेंक दी। इसके बीप्य परचात् बीतुलमें पण्डित मोतीलालजीसे इस बटनाका इरला बुजालेकी कोशिश की गयी। जब एक बिसाल कम-कनाम पण्डितजी बोलनके लिए खड़े हुए तब एक बकील साहबन उनसे बड़ी होशंगावाइबाका प्रश्न रोहराया। समापतिके इबातपर उस समामें क्याचित् कोई स्वानीत सज्जन बैठे हुए थे। पण्डित मोतीलालजीने प्रश्न पुछनेवाले बकील साहबको मुँहसे जबाब देते हुए कहा 'चार पाँच रकनेवालीय मैं सिर्फ़ चारपाई नहीं जाता सड़नेवालोंमें मैं पै पतन नहीं जाता और यदि आप इस बेचारी स्वतन्त्रताके विरोधी हों तो मैं उन्हें-उड़े इसी समामें आपको ला सकता हूँ।' इतना बड़कर पण्डितजी अपनी आरचार स्वाभाविक हँसीमें बिसखिला पड़े। बहुतकी आनन्द्यकता नहीं कि प्रश्नकर्ता महीबम को क्याचित् उक्त प्रश्न करनके ही लिए उस मनाम समये गये थे समासे पलायन कर गये। लोगान उन्हे समजाया भी किन्तु वे बिसकी यानें। न कने गम तो बल गम।

एक बार मैं पण्डित मोतीलालजीका आनन्द भवन प्रयागमें देखा। बुताबमें जीव हीनेके कारण और प्राप्तका बलवान् बहुमल एकमुकी हो जानके कारण न जल्पण प्रसन्न थे। उन समय स्वर्गीय छिट जमनामालजी और मैं दोनों ही आनन्द भवनमें टहरे थे। मैं छईब इन बिचारोंमें मुडरता रहता था कि अमीरीकी शिन्दयोमें तरीबीक बिचार किस तरह मिलकर रह



सकते हैं। (जमी भी इस विषयपर भी विचार करता रहता हूँ।) पण्डित मोतीलालजीने इस सम्बन्धमें अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा था जो अपनी अमीरीकी शिखरोंकी सुबिधाएँ त्याग कर छरीबीकी सचामे नहीं बन सकता उसके लिए इस वेद्यम जरूरी नहीं मिलेगी। उसके लिए किसी भी देशमें भाग्य नहीं मिलनी चाहिए।

यद्यपि मोतीलालजी सत्काशीन युक्त घास्तक नामी बकीर्नामि वे किन्तु उनकी आँखोंके सामने सर्वत्र अपने देशका भ्रान्तिग्रस्त रहता था और अपने व्यक्तित्वको देशकी सचामे सबा देनेकी उनकी बहुत कमजोर किसीसे मात जानेकी तैयारी न थी। जम्मा कलकट कमरची लड़ी हुई मूर्तें पढ़ते समय आँखोंपर चश्मा अध्ययनम कौन हो रहनेवाला स्वभाव और अपन मजस-बीसे जवनका छोड़कर दान्डीजीकी साबरमतीवासी बुटिमकी तरह शौड़ क्वा सचमकी सामर्थ्य तथा अपनी सुबिधाको छठरेमें डालकर सर्वत्र अपनी सबाकी लगन और उसके स्वकपको बढ़ाते जागा—य सब पण्डित मोतीलाल नेहरूकी एसी विधेयताएँ थीं जो उनकी-की ठीक-ठीक बैसाइ महापुरुष म ही प्राप्त हो सकती हैं।

## राजर्षिका जीवन-दर्शन

अद्वैत दण्डनजी जीवनके व्यापारके महत्त्व आदर्शोंकी बहु छिन्नी हैं। जसमें-से हम युगों-युगके सभ्यताके आचरणको साँककर देख सकते हैं। जस ही वे देखका वह सत्य है जो उच्च जीवन भी है और उच्च जीवन का उत्पन्न-विस्तार भी। जो जन्म-करणकी यज्ञान विजय भी है। मानव करिन्द्रा उत्कृष्टतर ज्ञानम भी और ऐति-जीतिकी ईमानदारी भी।

समग्र पंडित बर्ष पहलकी बात है। एक बार मैं साहीरके अज रतार-मकममें पड़्य साका साकपतरायजीसे बातें कर रहा था। उन दिनों दण्डनजी साकाजी-द्वारा संस्थापित राजनीतिक शिक्षक विद्यालय ( नितक स्कूल ऑफ पॉलिटिक्स ) के या तो अध्यक्ष चुन गये थे या चुन नामका हो थे। साकाजीका कहना था कि दण्डनजी बहुत शिक्षी हैं और वे राज नीतिक शिक्षक विद्यालयके अध्यक्षके रूपमें अपनी भी कामवासी सेवाकोदे लांग विरोध कुछ न लेकर वही बैठन लेना चाहते हैं जो अन्य सामान्य सदस्योंको मिलता है। उन दिनों ठा हम विषयपर अद्वैत दण्डनजीसे कुछ पूछनेकी हिम्मत नहीं हुई किन्तु सन् १९४३ में जब मैं अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलनका अध्यक्ष हुआ और वे गोरखपुर जन्मे कूँकर आम तब मैं उनसे साकाजीकी बहु वर्षों पुरानी शिक्षण बोधरायी। दण्डनजी साधनमन हो ठठे। बोले साधनसाकाजी यह कैसे सम्भव था कि राजनीतिक शिक्षक विद्यालयका समापति अध्यक्ष करते। साकाजी कहान् थे। उनके भारत और समरीकामें पठाये गये भारतीय स्वतन्त्रताक कहोंकि किए मेरा सिर झुक जाता है। वहाँ मैं और वहाँ वे। किन्तु अद्वैत मुस राजनीतिक शिक्षक विद्यालयका अध्यक्ष बनवाया और यह कैसे सम्भव हो

सकता था कि मैं अपने-पैसों को गहाण हूँ।

एक बार नामा-नरेख अपने प्रभु अँबरेखासे बहुतगुह हुए और उन्होंने भीयूत पुण्यात्मासासबी टण्डनकी अपने गह्राका दीवान बनाया। क्यूते हैं एक बार टण्डनजीने प्रयाग जानेके लिए उनसे छुट्टी माँपी जिसे लोका छट और प्रयागकी भूमि उन्हें बहुत मिय है। तबमों नामा-नरेखने इनकार तो नहीं किया किन्तु टण्डनजीकी छुट्टीकी माँगवर वे बोले कुछ नहीं। टण्डनजीने तत्काल प्रयाग पहुँचकर अपना त्यागपत्र नामा-नरेखकी निम्नता दिया। इस प्रसंगकी रं बनारसीबाठकी वसुर्वबोसे प्राप्त संसारके सवाहरण-कारा सचक्षा था सकता है। क्यूते हैं देशके किसी महाभात्य बनिम सज्जनन हिन्दी-जबतुके एक व्यक्तिको अपने एक मुप्रसिद्ध वैदिकमें विमुक्त करनकी बात कही। क्यूते अपने सब मुस-मुविबार् भी लिख बी जो वे उन्हें देना उचित समझते थे। पण्डित बनारसीबाठजीने प्रगत 'बनिम सज्जनको लिख दिया कि मछली पकड़ने ली खुद साबोनी और मवर वच्छनकी कोसित बीजिएया तो यह आपकी था जायेगा।

टण्डनजी अत्यन्त नम्र हैं किन्तु राष्ट्रीय तथा भारतीय भाषाओंके गौरवकी रक्षा करनमें वे कभी न मुहनेवाके व्यस्तियोंमें-से हैं। जब वे मात्यन हैं तब होते हैं तो अपने छोटे-छोटे सवाहरकोंमें विपन्नको इस तरह पूर देते हैं कि लोकजीवन उनका अगम्यसम्बक हुए बिना नहीं रह सकता। अपने सिद्धान्तोंके वे इतने पक्के हैं कि स्वराज्य निम्ननेके फाटपट्ट एक बार हिन्दीसम्बन्धी प्रस्तावपर मत देना पड़ा तो उन्होंने काँवेठी मोतिसे अधिकूल (प्रस्तावको हिन्दीके हितमें न माननेके कारण) उसके विरोधम संसदुम अपना मत दिया और साथ ही काँवेठसे त्यागपत्र भी दे दिया।

मैंने तो सदा यह माना है कि टण्डनजीके हाथ जो कुछ होकर बाबा बन इन देशकी राष्ट्रीयताका उच्चतर चरित्र था। इप्रोसिद्ध महामना ग्रीवजीने एक बार वयसीबाबों (जब मैं लखनवाके एक विद्यार्थीको

हिन्दू विश्वविद्यालयमें प्रवेश करनेके लिए कहा था ) प्रसंगपर कहा था कि पुस्तोत्तम बड़ी बाकता है भी उसका अन्त-करण उसे जाना देता है। मारतकी बातीयता बहुत बसवान् है कि उसके पास पुस्तोत्तमशाय टण्डन-बीसा व्यक्ति मौजूद है। ज्ञान जब जाना पड़ने लगता है और बसोप जब विविध होने लगता है, तब टण्डनबीकी तरफ देखकर बस मिलता है।

जोय बरकर यह कहते सुने जाते हैं कि अडेय टण्डनबी नेबल हिन्दीके बहुत बड़े जगत है। किन्तु टण्डनबीने एक बार मुझसे कहा था और इस बातके उन्होंने कहा-तहाँ मायब भी दिये थे कि यदि हिन्दी मारतीय स्वतन्त्रताके जाड़े जावेगी तो मैं स्वयं उसका पका बोट हूँवा। वे हिन्दीको देसकी आबादीके पहुँचे आबादीके प्राप्त करनका धायन मानते रहे हैं और निजानके बाद आबादीको बचाये रखनेका। बम्बईमें माई कन्हूयाठाकजी भाजिकाठाकजी मुन्डीके यहाँ टण्डनबी और मैं एक ही कमरेमें ठहरे हुए थे। जब मैं मच्छी बुजराती और हिन्दीका गुणवान कर रहा था और टीनके साम्यकी बात कह रहा था तब टण्डनबीने कहा था 'मैंने सुना है कि तमिळ तेकुमु और मसमकाकमये बहुत अच्छा साहित्य है। तमिळ तो मासनत्तलजी जाग ही के देसमें लड़ी बोली जाती जकामें एक बहुत बड़ा नाव तमिल बोल्ता है और सियापुर और मसमकाका एक बहुत बड़ा नाव तमिल बोल्ता है। क्या बिना मुणोंके इतनी जगह जाया बोली जा सकती है। उस समय मैं सोचता रहा कि इस व्यक्तिको समस्त मारतवपका फिटना जमान रहा है ?

जोय यह सुनकर जचम्बा करेंगे कि महात्मा गान्धी मत्तमेवके समय भी टण्डनकी बहुत मानते थे। उन्होंने एक बार कहा भी था कि हिन्दी यदि इस देसकी कीर्ति है तो इतीलिए कि पुस्तोत्तमशाय-बीसा महान् व्यक्ति जमके संचालक है।

अडेय टण्डनबी उर्दू-शिक्षाके बड़े हिमायती हैं। वे स्वयं उर्दू खेर बड़े जायसे पढ़ते हैं और जब वे उत्तर प्रदेश विधान-सभाके माननीय ज

वे तब उन्होंने अपनी नीति स्पष्ट करत हुए। मुसलमान मिर्चीको अपना भाई पतलाया था। इसीलिए उनकी हिन्दीकी रीति-नीति मुसलमान भाइयोंको समझमें तो आ सकती थी किन्ती अंगरेजकी समझमें आना कठिन था। वे हिन्दी बोझनेवालोंपर यह उत्तरदायित्व है कि वे सारे बयतका स्वागत करें। इस विषयमें कसबे सबक सीखना चाहिए। पिछले महाभुद्धमें कसबे समस्त संसारके कम्युनिस्टों और कम्युनिस्ट देशोंका समर्थन करता रहा किन्तु बनने कसकी स्वतन्त्रता बुद्धता और आर्थिक अक्षमताको लक्ष्यमें नहीं पड़ने दिया। इसीलिए उसके यहूकि आधिपत्य विस्मयमें अमलका दिखा रहे हैं। और उसके यहूकि बनने कितने ही जोबाको लड़ावता मिल रही हैं।

हिन्दीके समर्थनके क्षेत्रमें प्रयास पिछले बालीस-पचास वर्षोंमें ही आये आया। हमके पहले काशी आगरा बालीपुर यही स्वातंत्र्य हिन्दीके यह थे। टक्करकी और अनेक मिर्चीने अपने स्थान और उत्तरांचल प्रयागकी हिन्दीका पद बनाया। यदि हम समस्त मुसलमानोंकी तरह हिन्दीका विस्तार चाहें तो हमें समस्त विधोवा-बैध उन छोटी-छोटी इतर करनी चाहिए जो हिन्दीमें छाने लगे हैं और अपना विस्तार इनी आपात विस्वका प्रदान कर देते हैं। इसी तरह हमें टक्करकी अक्षमता और प्रयत्नको समझना चाहिए। हिन्दी-बादी बहुरंग बिन कोर्गेमें टक्करकी मजहब लड़ाया आया है। वह नीची नहीं अक्षितराम ही नहीं है। केवल आपातकालोंको अपनी बाकिरी बेनेके लिए सुकम सीडिमा चाहिए इसीलिए हिन्दी गलतका निर्माण किया गया है।

एक बार टक्करकी बुलकनाकर कहा था कि अब तो हिन्दीको सारे देशकी भाषा बनकर रहना पड़ेगा। हमकी विचारित प्रयत्नों ही नहीं सजा और सचताओंके कपोमें परिवर्तन करना पड़ेगा। क्या आप इसके लिए प्रस्तुत हैं? एक बार यह भी कहा था कि यदि हिन्दीका नाम भारतीय रहे तो बेसा रहेगा? यह सन् ४८ की बात है—समर्थनके अन्तर्गत् अविरोधकी।

मुझे यह सुनकर आश्चर्य नहीं हुआ और हिन्दी-बपतुको यह सुनकर यह हुए बिना न रहेगा कि इस बेसके एक प्रान्तकी गवर्नरी टण्डनजीके सामने रखी गयी। तब उन्होंने अपनी साधु-सुलभ गमलाके साथ इनकार कर दिया। इस विषयमें उनका कथन बहुत आश्चर्यजनक था। उनके मतसे यही काम छोटा नहीं है कि हमारे प्रदेशमें जहाँ-जहाँ गवर्नरियाँ काममें हुई हैं हम वहाँके जनजीवन और चरित्रोंकी सहायता करें। सन् १९२४ में स्व. बनेनचक्रवर्तीके पत्रपुरमें बजनेवाले राजाजीके मुकदममें गवेषजीका बलुव्य सिद्धवानेके लिए जब मैं टण्डनजीके पास कानपुरके प्रयाग यमा तब मैं प्रयागमें रहकर बजावन कराया तो वीर जब दिनों साधुवर यी दियोदी हरि हिन्दी साहित्य सम्मेलन कार्यालयमें टण्डनजीके साथ थे। उस समय टण्डनजीने जो संवेदीकीमे बलव्य सिद्धवाया था और जिसे गवेषजीने कुछ नमन्य परिवर्तनोंके साथ पत्रपुरकी बलाकतमें वेष्ट किया था मैंने देखा कि उस बलव्य सिद्धवाते समय कानूनको या नाति-नियमकी कोई भी सिद्ध टण्डनजीके चेहरेपर नहीं थी। मैं यह भी निश्चय कर चुँ कि कानपुरका प्रताप उन दिनों हम दोनों के स्वाधीनप्रेता प्रकृतिर्वीका घायक और भायक था तथा घरेलू पुष्पीतमहासजी टण्डन उस पक्षके दृष्टियोंमें-से एक थे।

हिन्दी कविता और हिन्दी पद्यके प्रति ही टण्डनजीका आकर्षण नहीं है, बर ये हिन्दी साहित्य सम्मेलनोंमें जाते हैं। तब हिन्दी पुस्तकोंके प्रकाशकोंकी बुझागौरा बाहर कुछ-न-कुछ पुस्तकें अवश्य खरीदते हैं। जिन दिनों वे साहीरके बजाव मेहनत बीक्रे गीतेवर व कम दिनों व अपन बंशन का भाव उस बरेसमें बजाया जानवासी हिन्दी पाठ्यात्मामोंके लिए खर्च कर देते थे। यह बात मुझसे सन् १९४० में स्व. पीरवासी पत्रेपरतजीन बनी थी।

१९२ में पटना हिन्दी साहित्य सम्मेलनके समय तथा १९२४ में भी टण्डनजी कदाचित् डाढ़ी नहीं रहे हुए थे। वे सदैव रंगका चेटा गाँवते

बोच ही में बिपमको स्थाप दे तो उसका उत्तरदायित्व ठण्डनजीपर नहीं हो सकता । मैं ने इस बातको भरपूर ध्यानबानी रखते हैं कि उनकी बातों-से आत्मनुकका मन न दुखे । मैंने बापबाकी जस प्रभुतिमें उन्हें कभी रस करते नहीं देखा बिधि सपनपूजक बात कहते हैं । वे मानते हैं कि बापबाका पक्ष लेना अस्विच्छ रहनेवालेके लिए स्वर्ग बड़ा अपराध है । यदि किसी समूहमें आप ठण्डनजीको देखें तो ठण्डनजीके स्वभाव कीज और सौजन्यके प्रति आप प्रभावित हुए बिना कहा रह सकते । आत्मन्की बात यह है कि कोई भी चर्चा उनकी आरत नहीं हो गयी है । उत्तरके समस्त मामलों परलोंपर वे उत्तुकतापूव विचारालुकी तरह विचार करते हैं । उत समय सबता है कि उनको ललित विवेचीको धारणी तरह निर्मलतापूर्वक बिना बके बहनी पड़ी है । यह बहुत बड़ा बात है कि कच्चे और मिनाये हुए अनामकी धानेकी बिलन भाषण वाली ॥ यह विचारोंकी और उनकी दाय करबेवाली नाकतकी नासक आरतके खरेब बधा रह लके अब कि एक आदतन दूमरी आदत रखकर ही और उनकी सीरिरीपर अपन स्वभावके पैर बधा-जमाकर ही मनुष्य आवे बहता रहता है । लयता है उनको अपनी मम्मर्च बधामुनी आवतोंको ऊर्ध्वमुखी स्वभाव बना लिया है । उन्होंने अपने जीवनमें जितना सहा है । जतना कभी कहा नहीं । मानो छुटते आना वे पीढ़ियोंकी परम्परा बना देना चाहते हैं । उनकी बनिक्ता हो या सम्पत्ति की बनिक्ता स्वकी बनिक्ता हो या ज्ञानकी बनिक्ता वे किसीको अपने पटिब देववाचीपर सवार हीते नहीं देना सकते । बच्चचित् इसीलिए अब मैं उनके पास ठहरा मैंने वहाँ सम्योका माहित्य ही बड़ा पाया ।

इतनी बज आबरवकताजीपर उन्हें जीवनकी लज्ज लब गयी है मानो उनका अन्तर्बाह्य सन्तुष शोक-शोक बढता है । उनकी सति पागो उनके अदित्यका बहु अधिकार है, वो अपने कुने देवाकी स्वतन्त्रता निरबके आरतों बाग और हिन्दीके उपपनका कज बराबर किने काटीनी । उनका जीवन हाकबातकी मुहरकी तरह नहीं पड़ता है । अपने यार्द जोडता जाता है

और वस्तुवा संस्कारों और व्यक्तिगत रूपमें निर्माण काय किया जाता है। इसका यद्यपि उनके बचनोंपर दूरों एकत्र ही सकता है एक एडवोकेट के माते उनके मस्तिष्कमें जी अनेक कविता है किन्तु कपया और मस्तिष्क की क्षमिसे अधिक व भारतीय संस्कृतिका मूल्य अधिक है और भारतीय चरित्रको इसका अंश उठाना चाहते हैं कि जिसपर कपया और मस्तिष्क की क्षमि बढ़ावी जा सके। क्योंकि वे मानते हैं कि मस्तिष्ककी क्षमि बढ़ी जसे हो वह किसी देश और किसी जातिके चरित्रसे अंधी नहीं हो सकती इसीलिए काव्य विषय कलाकृति नाटक और चर्मोपदेश इस सबसे परे पुस्तकमयस्य टखन मानो शरीरोंके जीवनमें बुद्धिमत्त जाना जानते हैं। अतएव मैं जानता हूँ वे मानते हैं कि जीवनकी उन्नति संसका नाम है जिसके लिए केन्द्रित नहीं वेनी पड़ती है। यही कारण है कि टखन की बापूजी डांग इतने सम्मानित किये गये कि यदि कभी महारमा मागधीके साथ मठमेर भी हो जाता तो महारमाकी टखनकीको सेष्ठताक कारण सगाठार मठमेरके विषयोंपर भी सगब मलाह रहे रहते थे।

यदि एक हाकमें कोई सीमाय और दूसरमें कनसेवा लेकर आये तो जहाँ तक मैं जानता हूँ टखनको दूसरेकी छतोर लगा लेने और पहनेको टुकटा देने। उगना है विषयके यथार्थ निरास और संस्कृतिमें वे कोई भेद नहीं मानते। जो बात उन्हें अच्छी है, वह कहते रहे हैं और कहते रहेंगे। बचनोंसे बढ़ी नहीं जायानोंसे बढ़ी नहीं वे बुझते बढ़ी कहेंगे। वे जसे ही अंधे जगों और व्यक्तिगतोंके अवतरण अपने मापनोंमें रते किन्तु हिन्दी संसार का केवल उनकी तरफ देनकर उनके समग्रक स्वाभावकी तरफ देनकर ही जीवन रहा है और जीवन रहेगा। यदि मैं हिन्दी-जगत्के हृदयका जाननवा यह कहूँ तो हिन्दी-हिन्दीके लिए उन्हें किसी अन्य पवित्र और आदमबादरी आवश्यकता नहीं है। उन्हें पुस्तकमयस्य टखनकी आवश्यकता है।

मैं जानते हैं कि किना जानीय नैतिकोंकी महत्ता पुस्तकोंमें जाकर



घराने धकेले से घबोकी गलीमें कोई बूझता नहीं है, और घरोंकी गल्लेसे कोई पार नहीं उतरता। इसीलिए हमारे घरोंमें यह कहा 'रस्ता वह जो हमें ऊपरकी तरफ़ के जाये' बरम हमारा वह जो हमें ऊँचा सत्य और हमारा व्यक्तित्व वह जो अपने चरित्रके हाबोस अपनी संस्कृतिमें उसे यूँकता रहे।" इस व्यक्तिका सोचना भी सोचना है। गुप रहना भी इस व्यक्तिका घुमना भी सोचना है, ठहर जाना भी इस व्यक्तिका बाँटें सोचना भी सोचना है बाँटें पूरे केना भी। और उस इस बमानेका इरीदले प्रीय और बैपदासे बैपदा व्यक्ति पढ़ सकता है। देना व्यक्ति गरम बमन बैनके रहते हुए भी माने सुखीपर टेंगा होता है। वह व्यक्ति नहीं रह जाता व्यक्तित्व बन जाता है।

हिन्दी भाषा और भारतीय साहित्यके प्रति सगक विचार महात्मा गान्धीसे बहुत कम मिलते-जुलते हैं। वे अक्सर यह कहते देखे गये हैं कि महात्माजीसे सगकले समय मुझे अच्छा नहीं लगता। किन्तु साथ ही वे ही एक हैं जो उदात्तापूर्वक महात्मा गान्धीसे कम सके और उसी वृत्तिसे अपने प्रतिकूल सङ्गमवालोंको भी समझ सके। जो जोष पक्षोंकी प्राप्तिसे अपनी आँखोंमें चोभियाये रखते हैं वे सके ही उन्हें न समझ सकें किन्तु जो सनेगोंमें पक्षोंकी प्राप्तिसे समय पिछड़े रहनाका साहस पते हैं व टण्डनजीके स्थापित धीक जीवन्य और साइसको समझत रहे हैं और समझ सकेंगे। वे जानते हैं कि 'ही' कहनेमें जिस उत्तरदायित्वकी आवश्यकता होती है कमी-कमी 'ना' कहनेमें उससे बड़े उत्तरदायित्वकी आवश्यकता ही जाती है।

हिन्दीका जानकार यह अनुभव करता है कि जो हिन्दी इस देशकी समस्त भाषाओंके हित-मिक्त जाने और उन्हें ऊँचा सत्यके बघोष नहीं करती, जो हिन्दी देशमें रहकर बकन रहना चाहती है, जो हिन्दी अपने धैर्यके बड़े होनेका गर्व कर सकती है और हिमात्मकी महान् सम्पदा नहीं बन सकती तथा जो हिन्दी इस देशके प्रत्येक भाषा-भाषी और निवासीक

बीरब और ठक नहीं बन सकते वह बरिछी हिन्दी पुस्तोत्तमदास टण्डनकी हिन्दी गयी है। पुस्तोत्तमदास टण्डनकी हिन्दीके सिरपर हिमात्म-या मुकुट सोमिष्ठ है। हिन्दू और ब्राह्मण उसकी मुद्राएँ हैं, बंगा और यमुना उसके कण्ठधार हैं। नमरा और ताप्ती उसकी किकिनी बनकर सोमिष्ठ हैं। उसकी छातीकी किनारों कृष्ण कावेरी और महागरी कङ्कर मार रही हैं और समुद्रकी तरह पुस्तोत्तमदास टण्डन केकल उसी हिन्दीके चरणोंमें पड़ाई का रङ्ग है और पछाई काता रहेगा। यह कैसे सम्भव है कि बंगाल और तमिल जिसे स्वीकार न करे महापट्ट मुद्रात आसाम और पंजाब जिसे स्वीकार न करे, वह पुस्तोत्तमदास टण्डनकी हिन्दी हो। वे हिन्दीके उसी सम्मान्य महान् रूपके सपासक हैं जिसके विषयमें सन्तुष्ट विनावा कहते हैं कि बानी बन्द तो उसी पट्टकी होती है जो मरने लगता है।

राजपिंडा टण्डनजीका इस बातसे कुछ केना-देना नहीं है कि हम उनका सम्मान करते हैं या नहीं करते। सम्मानके सामान सजाते कभी देखे नहीं जा सकते।

सोय न जान क्यों राजबोलाबाचारीजीको दोष देते हैं। जो हिन्दी प्राचीन हिन्दी न बलवा सके और केवल अपने अधिकारोंकी सुरक्षित रखनेके लिए हिन्दीका विरोध करते हैं, उन्हें भी राजाजीको दोष देना अधिकार किस तरह है मैं नहीं समझ पाता। सोय प्रयोग बिस्तार और घटानकी दिशामें इस देशकी भाषाओंकी अन्य देशोंकी भाषाभासे सभी बहुत सीखना है। वह दिन बन्ध होवा कि हिमात्मकी तरह हम अपने जन्म-पन्था और काम्यामें पुस्तोत्तमदास टण्डनको याद कर सकें।

अनेक बार टण्डनजी काटना प्यारे हैं। जब वे अखिल भारतवर्षीय नागरिकोंके सम्मेलनके गते लखनऊ प्यारे तब स्वाधीन भीरुकण्ठधर महा-विद्यालयमें इनका आयन हुआ था और उनके सम्मानमें भोज दिया गया था। हिन्दू एक दिन आइकी छिटुरती मुहूर्तमें बीप्टी वे राजवमक प्रकाशके भी जोयप्रकाशको तथा भारतीय-अन्धकारके भी बाधम्पति

पाठकके साथ जगहवा पधारे थे। उन दिनों वे स्वयं कम थे किन्तु उनकी साँस-साँस मानी बीबीकी प्रिया और आशीर्वाद बनकर बँट रही थी। उनकी रुबिण्ड बोल्नेवाला ही नहीं समझे प्रत्येक लक्ष्य बननेवाला व्यक्ति भी यह जानता है कि जो सदाचा उनमें है वह विश्वको दुर्लभ वस्तुओंमें-स एक है। वह टखनजीके साथ है टखनजीके साथ रहेगी और उनकी अपनी वस्तु है।

अद्वैत पुस्तोत्तमदासजी टखनके सबल व्यक्तिबन्दी मेरे प्रणाम ।\*



\*यह लेख राबिण्ड टखनजीके निधनसे लगभग डेढ़ वर्ष पूर्व लिखा गया था।

